ओ३म्

दयानन्दसन्देश

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट का मासिक पत्र

जून २०१९

Date of Printing = 05-6-19
प्रकाशन दिनांक= 05-6-19

वर्ष ४८ : अङ्क ७
दयानन्दाब्द : १९५
विक्रम-संवत् : बैसाख-जेठ २०७६
सृष्टि-संवत् : १,९६,०८,५३,१२०

संस्थापक : **स्व० ला० दीपचन्द आर्य**
प्रकाशक व सम्पादक : धर्मपाल आर्य
सह सम्पादक : ओमप्रकाश शास्त्री
व्यवस्थापक : विवेक गुप्ता

कार्यालय :

दयानन्दसन्देश (मासिक)

४२७, मन्दिर वाली गली, नया बांस,
खारी बावली, दिल्ली-६
दूरभाष : २३९८५५४५, ४३७८११९१
चलभाष : ९६५०५२२७७८
E-mail : aspt.india@gmail.com

एक प्रति ५.०० रु०
वार्षिक शुल्क ५०) रुपये
आजीवन सदस्यता ५००) रुपये
विदेश में २०००) रुपये

इस अंक में

- वेदों में महाभारत... २
- वेदोपदेश ३
- १७वीं लोकसभा का चुनाव परिणाम ५
- यह कैसा विश्लेषण है! ८
- वेद और नारी गौरव ११
- देशभक्त, त्यागी.... १४
- अपनी आत्मा की आवाज..... १६
- आत्मा और परमात्मा.... १८
- श्रीराम जी..... २१
- ब्राह्मणादि ग्रन्थों.... २३
- बौद्धिकता के नाम पर.... २५

विशेष : दयानन्द सन्देश में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। उनसे सम्पादक की पूर्णतया सहमति आवश्यक नहीं है। अतः किसी भी चर्चा/परिचर्चा एवं वाद-विवाद के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी होंगे।

सत्यार्थप्रकाश

प्रचार संस्करण ३००० रुपये सैकड़ा
स्पेशल (सजिल्द) ५००० रुपये सैकड़ा में प्राप्त करें।

वेदों में महाभारत के नामपद

(उत्तरा नेरूरकर -९८४५०५८३१०)

पिछले मास हमने रामायण में पाए जाने वाले नामपदों के वैदिक आधार देखे थे। प्रतिज्ञानुसार, इस माह मैं महाभरत में पाए जाने वाले कुछ पात्रों के नामों का वैदिक आधार दे रही हूं। महाभारत के पात्र रामायण से कहीं अधिक हैं। इसलिए कुछ रोचक उद्धरणों को ही हम देखेंगे।

महाभारत के सबसे लोकप्रिय पात्र तो कृष्ण और अर्जुन ही हैं, परन्तु इनके नामों के अर्थ क्या हैं, इस विषय में हम अधिक नहीं जानते। इसलिए इन्हीं से प्रारम्भ करते हैं-

१). **कृष्णः-** जनसामान्य में प्रसिद्ध है कि कृष्ण का अर्थ काला होता है और कृष्ण जी के सांवरे होने के कारण उनका यह नाम पड़ा। क्या वेद कुछ और कहते हैं? आइये देखते हैं। यह पद वेदों में अनेक बार पाया जाता है, विशेषकर यजुर्वेद के २४वें अध्याय के ४० मन्त्रों के अधिकतर मन्त्रों में किसी न किसी रूप में यह पाया जाता है। समस्त (=जिनमें समास हो) पदों में भी इसकी भरमार है। स्त्रीलिंग में भी 'कृष्णा' शब्द पाया जाता है। यह शब्द 'कृष विलेखने' धातु से निष्पन्न हुआ है जिसके अर्थ हैं जोतना, खींचना और खोदना। इन्हीं अर्थों से 'कृषि' और 'आकर्षण' शब्द निकले हैं। औणादिक नक् से यहां 'वर्ण' अर्थ का भी समागम हो जाता है- **कृषेर्वर्णे (उणादि० ३।४)-** जिसपर महर्षि दयानन्द की व्याख्या है - कृषतीति कृष्णः नीलवर्णो वा 'कृष्णा' पिप्पली वा, अर्थात् कृष के सभी अर्थों में कर्ता के अर्थ में अथवा नीले वा काले वर्ण के अर्थ में अथवा एक प्रकार की इमली के अर्थ में यह शब्द प्रयुक्त होता है। प्रधानतया वेदों में ये अर्थ ही पाए जाते हैं, इमली को छोड़कर। निरुक्त भी इस विषय में सम्मत है - **कृष्णं कृष्यतेर्निकृष्टो वर्णः ।। निरु० २।२०।।**

उदाहरण के लिए- **कृष्णोऽस्याखरेष्ठोऽग्नये...।। यजु० २।१।।** - जहां स्वामी जी का भाष्य है- अग्निना छिन्नो वायुनाकर्षितो यज्ञः, अर्थात् अग्नि से सूक्ष्म किया हुआ और वायु द्वारा आकर्षित किये जाने वाला अग्निहोत्र रूपी यज्ञ। इस प्रकार यहां 'कृष्ण' के अर्थ 'यज्ञ' हुए। द्वितीयः - "... **मेषो यमाय कृष्णो मनुष्यराजाय...।। यजु० २४।३०।।**" - जहां कृष्ण = काला हरिण। काले अर्थ में ही इसका अर्थ 'रात्रि' भी हो जाता है, यथा- **"अहश्च कृष्णमहरर्जुनं च ...।। ऋक्० ६।९।१।।"** इसी प्रकार 'अन्धकार' के लिए यह शब्द कई बार प्रयुज्य हुआ है। तृतीयः - **"कृष्णं नियानं हरयः सुपर्णा...।ऋक्० १।१६४।४७।।"** - जहां अर्थ हैं - कर्षितुं योग्यः, खींचने योग्य (पृथिवी वा विमान)। चतुर्थः - "...श्वेतान् ग्रीष्माय कृष्णान् वर्षाभ्यो...।। यजु० २४।११।।" - कृष्णवर्णान् कृषिसाधकान् वा - अर्थात् कृषि के साधक के अर्थ में ।

अन्य अर्थ कृष्ण महाराज के लिए तो सम्यक् नहीं बैठते, परन्तु, सांवले होने के साथ-साथ, आकर्षक अर्थ का भी हम ग्रहण कर सकते हैं। अवश्य ही कृष्ण जी के ऐसे-ऐसे गुण थे कि वे सभी के लिए आकर्षक थे, ऐसा महाभारत के वर्णनों से प्रतीत होता है। इस आकर्षक व प्रिय व्यक्तित्व के कारण ही वे सम्भवतः कौरवों के प्रति भेजे गए पाण्डवों के दूत बनाए गए।

२) **अर्जुनः-** जबकि यह पात्र तो प्रसिद्ध है, परन्तु इसके नाम के अर्थ अधिक ज्ञात नहीं हैं। यह शब्द अर्जनार्थक 'अज अर्जने' अथवा 'अर्ज प्रतियत्ने' से औणादिक उनन् प्रत्यय लगाकर निष्पन्न हुआ है, जिसकी व्याख्या में महर्षि कहते हैं - अर्जयतीति अर्जुनः शुक्लो

शेष पृष्ठ २७ पर

ओ३म्

वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। महर्षि दयानन्द

परमेष्ठी प्रजापतिः ऋषिः। **अग्निः = ईश्वरः भौतिकोऽग्निः देवता।** स्वराड् जगती छन्दः।। निषादः स्वरः।।

यज्ञशालादिगृहाणि कीदृशानि रचनीयानीत्युपदिश्यते।।

यज्ञशाला आदि घर कैसे बनाने चाहिए, इस विषय का उपदेश किया जाता है।

ओ३म्

भूताय त्वा नारातये स्वरभिविख्येषं दृꣳहन्तां दुर्य्याः पृथिव्यामुर्व्वन्तरिक्षमन्वेमि। पृथिव्यास्त्वा नाभौ सादयाम्यदित्याऽउपस्थेऽग्ने हव्यꣳरक्ष ।।

यजु० १-११।।

पदार्थः **(भूताय)** उत्पन्नानां प्राणिनां सुखाय **(त्वा)** तं कृषिशिल्पादिसाधनम् **(न)** निषेधार्थे **(अरातये)** रातिर्दानं न विद्यते यस्मिन् तस्मै शत्रवे बहुदानकरणार्थं दारिद्र्यविनाशाय वा **(स्वः)** सुखमुदकं वा। **स्वरिति सुखनामसु पठितम्।। निघं० ३।६।। उदकनामसु च।। १ । १२ ।।** **(अभिविख्येषम)** अभितः= सर्वतो विविधं पश्येयम्। **अत्राभिव्यो रुपपदे चक्षिङ् इत्यस्याशीर्लिङ्यार्धधातुकसंज्ञामाश्रित्य ख्याञ् आदेशः। लिङ्याशिष्यङित्यङ् सार्वधातुकसंज्ञाश्रित्य च या इत्यस्य इयङ् आदेश। सकारलोपाभाव इति।** **(दृꣳशः हन्ताम्)** दृंहन्तां वर्धयन्ताम्। **अत्रान्तर्गतो ण्यर्थः** **(दुर्य्याः)** गृहाणि। **दुर्य्या इति गृहनामसु पठितम्।। निघं ३ । ४।** **(पृथिव्याम्)** विस्तृतायां भूमौ **(उरु)** बहु **(अन्तरिक्षम्)** अवकाशं सुखेन निवासार्थम् **(अनु)** क्रियार्थे **(एमि)** प्राप्नोमि **(पृथिव्याः)** शद्धाया विस्तृताया भूमेः **(त्वा)** तं पूर्वोक्तं यज्ञम् **(नाभौ)** मध्ये **(सादयामि)** स्थापयामि **(अदित्याः)** विज्ञानदीप्तेर्वेदवाचः सकाशादन्तरिक्षे मेघमंडलस्य मध्ये, **अदितिद्यौरदितिरन्तरिक्षमिति मंत्रप्रामाण्यात्।। ऋ. १ । ८ । ६ ।१० ।। अदितिरिति वाङ्नामसु पठितम्।। निघं० १ । ११ । पदनामसु च।। निघं० ४ । १ ।। (उपस्थे)** समीपे **(अग्ने)** परमेश्वर! **(हव्यम्)** दातुं ग्रहीतुं योग्यं क्रियाकौशलं सुखं वा **(रक्ष)** पालय।। अयं मंत्रः श० १ । १ । २ । २०-२३ व्याख्यातः ।। ११ ।।

प्रमाणार्थ **(स्वः)** 'स्वः' शब्द निघं० (३ । ६) में सुख नामों में पढ़ा है और निघं० (१।१२) में उदक (जल) नामों में भी पढ़ा है। (अभिविख्येषम्) यहाँ अभि-वि के उपपद रहते 'चक्षिङ्' धातु को आशीर्लिङ् में आर्धधातुक संज्ञा होने से 'ख्याञ्' आदेश है और 'लिङ्याशिष्यङ्' से अङ, पुनः सार्वधातुक संज्ञा के आश्रय से 'या' को 'इय' हुआ एवं सकार का लोप नहीं है। (दृंहन्ताम्) यहाँ अन्तर्भावित ण्यर्थ है (दुर्य्याः) 'दुर्य्याः' शब्द निघं० (३ । ४) में गृहनामों में पढ़ा है। (अदित्याः) 'अदिति' शब्द ऋ० (१।८।६।१०) में द्यौ और अन्तरिक्ष अर्थ में आया है। निघं० (१।११) में 'अदिति' शब्द वाणी के नामों में पढ़ा है। निघं० (४।१) में 'अदिति' शब्द पदनामों में पढ़ा है। इस मन्त्र की व्याख्या शत० (१ । १ । २ । २०-२३) में की गई है। १ । ११ ।।

सपदार्थान्वयः **अहं यं भूताय** उत्पन्नानां प्राणिनां सुखाय **अरातये=अदानाय** रातिः= दानं न विद्यते यस्मिन्

तस्मै शत्रवे, बहुदानकरणार्थं, दारिद्र्यविनाशाय वा **अदित्याः** विज्ञानदीप्तेर्वेदवाचः सकाशादन्तरिक्षे मेघमण्डलस्य मध्ये **उपस्थे** समीपे **यज्ञं सादयामि** स्थापयामि (त्वा)= **तं** (तं) कृषिशिल्पादिसाधिनं (न) **कदाचिन्न त्यजामि**।

हे विद्वांसो! **भवन्तः पृथिव्यां** विस्तृतायां भूमौ **दुर्य्याः** गृहाणि **दृंहन्तां**=वर्धयन्ताम्। **अहं पृथिव्याः** शुद्धाया दिस्तृताया भूमेः **नाभौ=मध्ये, येषु गृहेषु स्वः** सुखमुदकं वा **अभिविख्येषम्** अभितः सर्वतो विविधं पश्येयम्, **यस्यां पृथिव्यां** विस्तृतायां भूमौ **उरु** बहु **अन्तरिक्षम्** अवकाशं सुखेन निवासार्थं **च, अन्वेमि** प्राप्नोमि।

हे अग्ने=जगदीश्वर! परमेश्वर! **त्वमस्माकं हव्यं** दातुं ग्रहीतुं योग्यं क्रियाकौशलं सुखं वा **सर्वदा रक्ष** पालय। **इत्येकोऽन्वयः**।।

भाषार्थ मैं जिस यज्ञ को **(भूताय)** उत्पन्न प्राणियों के सुख के लिये **(अरातये)** शत्रु के लिये, बहुत दान करने के लिए अथवा दरिद्रता के विनाश के लिये **(अदित्याः)** विज्ञान के दीपक वेद की वाणी से आकाश में मेघमण्डल के **(उपस्थे)** मध्य में **(सादयामि)** स्थापित करूँ **(त्वा)** उस कृषि और शिल्प आदि के साधक यज्ञ को **(न)** कभी न छोड़ूँ।

हे विद्वानो! आप **(पृथिव्याम्)** इस विस्तृत भूमि पर **(दुर्याः)** घरों को **(दृंहन्ताम्)** बढ़ावें। मैं **(पृथिव्याः)** शुद्ध विस्तृत भूमि के **(नाभौ)** मध्य में जिन घरों में **(स्वः)** सुख एवं जल आदि सुख के साधन हों, उन्हें **(अभिविख्येषम्)** सब ओर देखूँ, और जिस **(पृथिव्याम्)** विस्तृत भूमि पर **(उरु)** बहुत **(अन्तरिक्षम्)** सुख से निवास के लिये अवकाश हो, उसे **(अन्वेमि)** प्राप्त करूँ।

हे **(अग्ने)** जगत् के स्वामी परमेश्वर! आप हमारे **(हव्यम्)** परस्पर लेने-देने योग्य क्रियाकौशल वा सुख की सदा **(रक्ष)** रक्षा करो।। यह मन्त्र का पहला अन्वय है।

अथ द्वितीयमन्वयमाह हे अग्ने=जगदीश्वर! अहं भूताय उत्पन्नानां प्राणिनां सुखाय **अरातये** रातिः=दानं न विद्यते यस्मिन् तस्मै शत्रवे बहुदानकरणार्थं, दारिद्र्यविनाशय वा **पृथिव्याः** शुद्धाया विस्तृताया भूमेः **नाभौ** मध्ये ईश्वरत्वो **पास्यत्वाभ्यां स्वः**=सुखरूपं सुखमुदकं वा **(त्वा)**=त्वामभिविख्येषम्=प्रकाशयामि अभितः सर्वतो विविधं पश्येयम्।

भवत्कपयेमेऽस्माकं दुर्याः=गृहादयः **पदार्थास्तत्रस्था मनुष्यादयः प्राणिनो दृंहन्ताम्**=नित्यं **वर्धन्ताम्**।

अहं पृथिव्यां विस्तृतायां भूमौ **उरु** बहु **अन्तरिक्षम्**=व्यापकम् अवकाशं सुखेन निवासार्थम् **उपस्थे** समीपे **त्वा**=त्वामन्वेमि=नित्यं **प्राप्नोमि (न) न कदाचित् त्वा**=त्वां **त्यजामि**। **त्वमिदमस्माकं हव्यं** दातुं ग्रहीतुं योग्यं क्रियाकौशलं सुखं वा **सर्वदा रक्ष** पालय।। **इति द्वितीयः**।।

दूसरा अन्वय हे **(अग्ने)** जगदीश्वर! मैं **(भूताय)** उत्पन्न प्राणियों के सुख के लिये **(अरातये)** शत्रु के लिये, बहुत दान करने के लिए अथवा दरिद्रता के विनाश के लिए **(पृथिव्याः)** शुद्ध विस्तृत भूमि के **(नाभौ)** मध्य में ईश्वर और उपास्य होने से **(स्वः)** सुखस्वरूप एवं सुख शान्ति के निमित्त **(त्वा)** आपको **(अभिविख्येषम्)** सब ओर विविध प्रकार से देखूँ।

आपकी कृपा से ये हमारे **(दुर्याः)** गृह आदि पदार्थ और वहाँ रहने वाले मनुष्य आदि प्राणी **(दृंहन्ताम)** नित्य वृद्धि को प्राप्त हों।

मैं **(पृथिव्याम्)** विस्तृत भूमि पर **(उरु)** बहुत **(अन्तरिक्षम्)** व्यापक एवं सुख से निवास के लिए अवकाश **(उपस्थे)** में **(त्वा)** आपको **(अन्वेमि)** प्राप्त करूँ और **(त्वा)** आपको **(न)** कभी न छोड़ूं। आप हमारे इस **(हव्यम्)** परस्पर देने-लेने योग्य क्रिया कौशल वा सुख की सदा **(रक्ष)** रक्षा कीजिये। यह मन्त्र का दूसरा अन्वय है।

भावार्थ अत्र श्लेषालङ्कारः। ईश्वरेण मनुष्यं आज्ञाप्यते हे मनुष्य! अह त्वां सर्वेषां भूतानां सुखदानाय पृथिव्यां रक्षयामि।

भावार्थ इस मन्त्र में श्लेष अलंकार है। ईश्वर मनुष्य को आज्ञा देता है- हे मनुष्य! मैं तुझे सब प्राणियों को सुख देने के लिए पृथिवी पर स्थापित करता हूँ।

१७वीं लोकसभा का चुनाव परिणाम

(धर्मपाल आर्य)

२३ मई को मतगणना के बाद १७वीं लोकसभा की तस्वीर साफ हो गई और जनता ने उसी पुराने (नरेन्द्र मोदी के) नेतृत्व को नया व एक ऐतिहासिक जनादेश दिया। यदि मुझे सही स्मरण है तो उसके अनुसार किसी गैर काँग्रेसी दल को इतना प्रचण्ड जनादेश पहली बार ही मिला है। गैर काँग्रेसी सरकारें तो देश में अनेक बार अस्तित्व में आईं लेकिन अधिकतर ऐसी सरकारें कांग्रेस के ही रहमोकरम से चलती थीं। ऐसी सरकारों के सामने अस्थिरता का संकट हमेशा मंडराता रहता था तथा वे सरकारें अन्य मुश्किलों से कम समर्थन देने वाली पार्टी से अधिक डरती थीं। यदि एक विश्वनाथ प्रताप सिंह की सरकार को छोड दें, तो बाकी सभी गैर कांग्रेसी सरकारें कहने भर को ही गैर कांग्रेसी थीं। उनका समूचा नियन्त्रण कांग्रेस के ही हाथ में रहता था जिससे एक मिथक पैदा हुआ कि स्थिर सरकार केवल कांग्रेस ही चला सकती है तथा अस्थिरता गैर कांग्रेसी दलों की सरकारों का स्थाई रोग है। जिसके अन्दर स्थिर सरकार देने का मिथक पैदा हुआ वह (मिथक) शीघ्र ही अहंकार में परिवर्तित हो गया और एक धारणा के परिणाम स्वरूप एक पार्टी स्थिरता और दूसरी अन्य पार्टियाँ अस्थिरता का पर्याय बन गईं। संस्कृत के किसी कवि ने ठीक ही लिखा है-

"विस्मयो न हि कर्त्तव्यो बहुरत्ना वसुन्धरा।"

अर्थात् हमें कभी भी गलत भ्रम में अथवा संशय में नहीं रहना चाहिए क्योंकि यह धरती बहुरत्नगर्भा है। वैसे मैं अब तक लिखी पंक्तियों के कारण अवश्य आशंकित हूँ कि कहीं पाठक उपरोक्त पंक्तियों को पढ़कर मुझे कहीं किसी दल विशेष के विपक्ष में या किसी दल विशेष के पक्ष में खड़ा न कर दें। किन्तु पाठक यदि निष्पक्षता से पढ़ने के बाद विचार करेंगे तो कहीं न कहीं अपने आपको सहमत पाएंगे। मैं ऐसा मानता हूँ कि राजनीति में इस प्रकार के मिथकों का पैदा होना राजनीति और राष्ट्र दोनों के ही हित में नहीं है फिर चाहे इस प्रकार के मिथक किसी के भी अन्दर पैदा क्यों न हुए हों। राजनीति, राजनेता और राजनैतिक दल ये सभी राष्ट्र के लिए हैं, राष्ट्र की सर्वांगीण उन्नति के लिए हैं एवं राष्ट्र की एकता और अखण्डता के लिए हैं। जो राजनीतिक दल स्वार्थ व अवसरवादिता की राजनीति का प्रयोग राष्ट्र में करते हैं, वे एक प्रकार से राष्ट्र और समाज को राजनैतिक दृष्टि से अस्थिरता के दौर में धकेलने का काम कर रहे हैं।

देश की राजनीति में मजहबी कट्टरता, भाषावाद, जातिवाद, प्रान्तवाद इस प्रकार के खतरनाक वाद हावी होते जा रहे थे। अबकी बार देश के आम चुनावों में राष्ट्रवाद भी रहा और यह (राष्ट्रवाद) सारे वादों पर भारी पड़ा। मुझे यह लिखने में लेशमात्र भी संकोच नहीं कि इस (राष्ट्रवाद) ने न केवल जनादेश को नए सिरे से परिभाषित किया है, अपितु सुविधाजनक राजनीति करने वाले राजनीतिक दलों को अपनी शैली पर पुनर्विचार के लिए भी विवश किया है। मैं इस बात का कोई बहुत अधिक प्रतिवाद नहीं करुंगा कि इस (राष्ट्रवाद) का प्रयोग किसी राजनैतिक दल ने राजनीतिक स्वार्थ के बिना किया होगा। राजनीतिक विश्लेषकों के अनुसार राजनीति में राष्ट्रवाद का प्रयोग कोई अपराध नहीं है। २३ मई को मतगणना से जो जनादेश हम सबके सामने आया है उसने राजनीतिक विश्लेषकों व राजनीतिक पण्डितों की भविष्यवाणियों तथा समाचार चैनलों के पूर्वानुमानों को काफी सीमा तक झुठलाया है। इस अभूतपूर्व जनादेश ने पक्ष को और विपक्ष दोनों को ही सबक

सिखाया है। उपरोक्त जनादेश जिसके पक्ष में है, उस के सामने जनता-जनार्दन की भावनाओं तथा आशाओं की कसौटी पर खरा उतरने की चुनौती है तथा जिसके विपक्ष में है, उसके लिए यह जनादेश आत्म-मन्थन का गम्भीर अवसर है। चुनौती को अवसर में परिवर्तित करना और गम्भीर अवसर को चुनौती के रूप में परिवर्तित कर उसे धैर्य के साथ स्वीकार करना काफी पुरुषार्थ साध्य कार्य है। राष्ट्रीय जनतान्त्रिक गठबन्धन (राजग) पूर्व प्रधानमन्त्री स्व० अटल बिहारी वाजपेयी के समय में अस्तित्व में आया था जिसने तीन बार सरकार का नेतृत्व किया था एक कार्यकाल केवल तेरह दिन का था, दूसरा कार्यकाल तेरह महीने का था और तीसरा कार्यकाल पाँच वर्ष से कुछ कम का रहा। उसके बाद दस वर्ष तक कांग्रेस के नेतृत्व वाली यू.पी.ए. की सरकार बनी जिसके मुखिया मनमोहन सिंह रहे।

दस वर्ष के उपरान्त (२०१४) गुजरात के तत्कालीन मुख्यमन्त्री नरेन्द्र भाई दामोदर दास मोदी के नेतृत्व में राजग ने पुनः पूर्ण बहमत के साथ सत्ता में वापसी की। २०१९ का जनादेश २०१४ के जनादेश से काफी भिन्न है। उस (२०१४) समय अकेले भाजपा को लगभग २८७ लोकसभा की सीटें मिली थीं जबकि अब (२०१९) में अकेले भाजपा को लोकसभा की ३०३ सीटें मिली हैं, सहयोगी दलों की मिला कर सीटों का आंकडा ३५० से अधिक हो जाता है, तो मैं कह सकता हूँ कि जो चुनौतियाँ २०१४ में थीं, लगभग वही चुनौतियाँ २०१९ में हैं लेकिन चुनौतियों से जूझने की ताकत जो २०१४ में थी, वो ताकत २०१९ में काफी बढ़ी हुई है। अतः पुरानी चुनौतियों से प्रचण्ड जनादेश पाने वाली वर्तमान सरकार प्रभावी और निर्णायक ढंग से न केवल निपट पाएगी अपितु उन्हें समूल नष्ट कर देगी, ऐसी आशा करना, मैं समझता हूँ कि कोई बेमानी नहीं होगी क्योंकि ऐसा नव नियुक्त प्रधानमन्त्री ने संकेत भी दिया है।

सरकार कांग्रेसी हो अथवा गैर कांग्रेसी हो सभी को उन चुनौतियों से दो चार होना पड़ा है। हर सरकार ने अपनी-अपनी शैली में उन चुनौतियों का सामना किया। वर्तमान सरकार को भी उन्हीं चुनौतियों से दो चार होना है। सरकार के सामने आन्तरिक और बाह्य दोनों चुनौतियाँ हैं। आन्तरिक चुनौतियों में बेरोजगारी, मंहगाई, नक्सलवाद, बांग्लादेश के रोहिंग्याओं की घुसपैठ आदि ऐसी समस्याएं हैं, जिनका सरकार को समाधान करना है। बाह्य समस्याओं में चीन के साथ सीमा विवाद, पाकिस्तान द्वारा प्रायोजित उग्रवाद, जम्मू कश्मीर की धारा ३७० तथा ३५ए की समस्या आदि हैं, जिन्हें सरकार को हल करना है। पूर्व गृहमन्त्री राजनाथ सिंह तथा भाजपा के अध्यक्ष अमित शाह के दिए बयानों के अनुसार भी धारा ३७० और ३५ए को हटाना उनकी प्राथमिक सूची में है।

चुनौतियाँ पुरानी हैं, नेतृत्व भी पुराना है नया है तो सिर्फ और सिर्फ जनादेश है। राजनीतिक पण्डितों ने और भिन्न-भिन्न समाचार चैनलों ने चुनाव पूर्व जो अनुमान लगाए थे और चुनाव सम्पन्न होने के बाद भी जो अनुमान लगाए थे, मतगणना के बाद वे सारे के सारे अनुमान और विश्लेषण धरे के धरे रह गये। राष्ट्रवाद के मुद्दे के आगे सारे के सारे दूसरे मुद्दे प्रभावहीन हो गए। अब जबकि भाजपा के नेतृत्व वाले गठबन्धन ने ऐतिहासिक कहूँ या अप्रत्याशित कहूँ ऐसा स्पष्ट जनादेश प्राप्त कर लिया है, तो उस राष्ट्रवाद की अवधारणा को साकार रुप देना वर्तमान सरकार का नैतिक और राजनैतिक कर्त्तव्य है। जैसा कि प्रधानमन्त्री ने संकेत भी दिया है । मेरा ऐसा मानना है कि राजनैतिक परिणामों की निश्चित भविष्यवाणी करना सम्भव नहीं हो सकता। २०१९ के आम चुनावों में राजनैतिक विशेषज्ञों का अनुमान था कि इस आम चुनाव में मौजूदा सरकार के लिए साधारण बहुमत के आंकडे को छूना काफी कठिन रहेगा लेकिन जब चुनाव परिणाम आए तो सारी की सारी भविष्यवाणी धरी की धरी रह गई। मेरे एक मित्र कहने लगे कि

सरकार अब सम्भवतः राम मन्दिर निर्माण के मुद्दे पर कोई साहसिक फैसला ले सकती है। मैंने उनको कहा कि राम मन्दिर निर्माण से महत्वपूर्ण है जम्मू कश्मीर से धारा-३७० एवं नियम ३५ए को पूरी तरह से समाप्त कर उसे देश की संवैधानिक धारा से जोड़ना। महबूबा मुफ्ती, फारुक अब्दुल्ला और उसके बेटे उमर अब्दुल्ला के जो बयान आते हैं, वो बयान वर्तमान सरकार के लिए किसी चुनौती से कम नहीं हैं। जम्मू कश्मीर में अलगाववादी जिस प्रकार न केवल राष्ट्रविरोधी बयान देते हैं, अपितु राष्ट्रविरोधी गतिविधियों में भी संलिप्त रहते हैं और उन्हें बढ़ावा देने का कार्य करते हैं। इस प्रकार के राष्ट्रविरोधी तत्त्वों पर सरकार किस प्रकार प्रभावी अंकुश लगाकर उनकी देशद्रोही हरकतों को किस प्रकार नेस्तनाबूद करेगी, यह एक यक्ष प्रश्न है जिसका उत्तर जानने के लिए प्रत्येक भारतवासी अत्युत्सक है।

जिन मुद्दों को आगे कर वर्तमान गठबन्धन अप्रत्याशित जनादेश प्राप्त कर सत्तासीन हुआ है, उनको पूरा करना सरकार का नैतिक, राजनैतिक तथा संवैधानिक कर्तव्य है। महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश के छठे समुल्लास के राजधर्म प्रकरण में मनुस्मृति का हवाला देते हुए लिखा है -

"क्षत्रियस्य परो धर्मः प्रजानामेव पालनम्।
निर्दिष्ट फलभोक्ता हि राजा धर्मेण युज्यते।।"

अर्थात् राजा का प्रजापालन करना ही परम धर्म है और जैसा सभा नियत करे, उतना भोक्ता राजा धर्मयुक्त होकर सुख पाता है। इसके विपरीत दुःख को प्राप्त होता है। राजा के गुणों के विषय में ऋषिवर आगे लिखते हैं- "वह सभेश राजा इन्द्र अर्थात् विद्युत के समान शीघ्र ऐश्वर्यकर्ता, वायु के समान सबके प्राणवत प्रिय और हृदय की बात जाननेहारा, यम पक्षपातरहित न्यायाधीश के समान वर्तने वाला, सूर्य के समान न्याय, धर्म, विद्या का प्रकाशक अन्धकार अर्थात् अविद्या अन्याय का निरोधक, अग्नि के समान दुष्टों को भस्म करने हारा, वरुण अर्थात् बांधनेवाले के सदृश दुष्टों को अनेक प्रकार से बांधनेवाला, चन्द्र के तुल्य श्रेष्ठ पुरुषों को आनन्ददाता, धनाध्यक्ष के समान कोषों को पूर्ण करने वाला सभापति होवे। उपर्युक्त बातों पर ध्यान दिया जाए तो अन्धकार का अर्थ पाखण्ड और अन्धविश्वास से है। क्या हमारे नेता इस गुरुतर दायित्व का भी निर्वाह करेंगे? प्रचण्ड जनादेश प्राप्त करने वाली वर्तमान सरकार को एक स्वच्छ राजनैतिक मानकों को स्थापित कर ऐतिहासिक सुशासन की मिसाल कायम करनी चाहिए। यह सरकार महर्षि के अनुसार ऐश्वर्यकर्ता, प्राणवत् प्रिय, प्रजा के अन्तर्मन को जाननेवाली, सबके साथ पक्षपातरहित न्यायाधीश के व्यवहार करने वाली, न्याय, धर्म तथा विद्या का प्रकाश करने वाली, अविद्या, अन्याय के अन्धकार को मिटाने वाली, शत्रुओं को भस्म करने वाली, दुष्टों को बाँधने वाली, श्रेष्ठ पुरुषों को आनन्द प्रदान करने वाली और धर्म की वृद्धि करने वाली होवे। इसकी रक्षानीति में राष्ट्रवाद हो, इसकी शिक्षानीति में राष्ट्रवाद हो, इसकी विदेशनीति में राष्ट्रवाद हो, इसके उद्योग (व्यापार) और अर्थनीति में राष्ट्रवाद हो, आन्तरिक और बाह्यनीति में राष्ट्रवाद हो, ऐसी मोदी सरकार से अपेक्षा है। प्रधानमन्त्री मोदी जी ने अपने उद्बोधन में कहा भी है-

"मेरे जीवन का कण-कण और समय का क्षण-क्षण केवल और केवल राष्ट्र के लिए है।"

इस उद्बोधन के पश्चात तो उनसे सच्चे राष्ट्रवाद की अपेक्षा करना बहुत स्वाभाविक ही है। समस्त चुनौतियों पर सरकार को जय प्राप्त हो। परमपिता-परमेश्वर से प्रार्थना है कि वह नई सरकार को राष्ट्र के सांस्कृतिक, आध्यात्मिक, सामाजिक, नैतिक तथा धार्मिक मूल्यों को न केवल समझने की शक्ति प्रदान करे, अपितु उनकी रक्षा के लिए साहसिक निर्णय लेने की शक्ति सामर्थ्य भी प्रदान करे।

❑❑

यह कैसा विश्लेषण है!

(राजेशार्य आट्टा, मो. ०९६६९२६९३१८)

प्रिय पाठकवृन्द! देश की शान्ति व सुरक्षा पर प्रहार करने वाले देशी-विदेशी आतंकवादियों के मानवाधिकार के समर्थन में अपने ही देश के नेताओं (कुछ स्वार्थी) की आवाज सुनता हूँ और देश के लिए घर-बार लुटाने व नारकीय यातनाएँ झेलने वाले वीर सावरकर (तीनों भाईयों) को कायर प्रचारित करने वालों की धृष्टता देखता हूँ तो मन पीडा से भर जाता है और स्मृति पटल पर पाँच हजार वर्ष पुराना महाभारत का विनाशकारी दृश्य उपस्थित हो जाता है जब सत्य जानते हुए भी दानवीर कर्ण ने दुर्योधन के अन्याय का साथ दिया। पितामह भीष्म यद्यपि दुर्योधन के अन्याय के समर्थक तो नहीं थे, पर बाहरी आक्रमण होने पर हस्तिनापुर के रक्षक होने की मिथ्या प्रतिज्ञा की लाचारी दिखाकर दुर्योधन के पक्ष में खडे हो गये। द्रोणाचार्य व कृपाचार्य यद्यपि पाण्डवों के भी गुरु थे, पर अर्थ के दास बनकर अन्यायी दुर्योधन के पक्ष को जिताने के लिए पाण्डव पक्ष का संहार करते रहे। पाण्डवों के मामा शल्य अनजाने में दिये वचन का पालन करने की विवशता से दुर्योधन के पक्ष में जा खड़े हुए। बलराम ने भी दुर्योधन को अन्याय करने से कभी नहीं रोका, पर युद्ध के समय उन्हें दुर्योधन में प्रिय शिष्य (गदा-युद्ध) की छवि नजर आई। अतः वे श्रीकृष्ण (अर्थात् पाण्डवों) के विरोध में तो खड़े नहीं हो सके, पर पाण्डवों का भी साथ न देकर उन्होंने परोक्ष रूप से दुर्योधन का ही पक्ष लिया। उनका यह पक्षपात तब खुलकर सामने आया, जब अपनी प्रतिज्ञा पूरी करने के लिए भीम ने दुर्योधन की जाँघ पर गदा का प्रहार किया, तो बलराम इसे नियम-विरुद्ध कहकर भीम को मारने दौड़ पड़े थे। यदि श्री कृष्ण ने उन्हें न समझाया होता, तो वे भीम को मार भी देते।

अतीत या वर्तमान के साहित्यकार इन लोगों की वचनबद्धता का चाहे कितना ही ढोल पीटें, पर समाज में तो अत्याचारी को मिटाने के लिए शस्त्र न उठाने की अपनी प्रतिज्ञा तोड़ने वाला कृष्ण ही आदरणीय रहा है। सभी जानते हैं कि दुर्योधन के लोभी, ईर्ष्यालु व अहंकारी स्वभाव के कारण महाभारत युद्ध में देश का बहुत विनाश हुआ था। फिर भी कुछ लोग इसका कारण द्रौपदी के कटु वचन को बताने लगते हैं कुछ युधिष्ठिर की जुआ खेलने की प्रवृत्ति को दोषी ठहराते हैं, कोई कृष्ण के गीता-उपदेश (लड़ने से मना करने वाले अर्जुन को लड़ने के लिए तैयार करना) को जिम्मेदार ठहराते हैं। ऐसा करने वाले लोग क्या सीधे-सीधे दुर्योधन के पक्ष में नहीं खड़े हैं?

संस्कृत के महाकवि भास (ईसवी पूर्व) के समय में भी दुर्योधन के पक्ष को न्यायोचित मानने वाले लोग रहें होंगे, तभी तो महाकवि भास ने अपने नाटक 'दूतवाक्यम्; में दुर्योधन के मुख से कहलवाया कि पाण्डु को मुनि-शाप मिला था, जिसके कारण वे सन्तान उत्पन्न करने में असमर्थ थे। अतः पाण्डव तो देवपुत्र हैं। देवपुत्रों की हम मनुष्यों के साथ बन्धुता कैसे हो सकती है! फिर वे पिता के धन के अधिकारी कैसे हो सकते हैं! तब महाकवि भास ने वासुदेव कृष्ण के मुख से कहलवाया है- हे इतिहास के जानने वाले दुर्योधन! तुम्हारे पिता धृतराष्ट्र महर्षि वेद व्यास के नियोग से उत्पन्न हुए थे। फिर वे अपने पिता विचित्रवीर्य के धन (राज्य) के उत्तराधिकारी कैसे हो सकते हैं?

इस सत्य को सभी जानते हैं कि दुर्योधन ने महाभारत का युद्ध कर्ण के बल पर लड़ा था। यदि कर्ण श्री कृष्ण की बात मानकर पाण्डवों के पास चला जाता, तो युद्ध टल सकता था। पर उसने मुसीबत में दुर्योधन का साथ न छोडकर आदर्श मित्रता का उदाहरण प्रस्तुत किया, जो आज की दल-बदलू राजनीति करने वालों को दर्पण दिखा सकता है। इसके लिए कर्ण प्रशंसनीय है, पर यदि उसने आदर्श मित्र का कर्त्तव्य (पापात् निवारयति योजयते

हिताय - पाप से हटाना, हितकारी कार्य में लगाना) पहले निभाया होता, तो (आपद्गते न जहाति- मुसीबत में साथ न छोडना) बाद की अवस्था ही उपस्थित न होती। कर्ण ने जीवन भर अधर्म का साथ दिया, पर जीवन के अन्तिम युद्ध में उसने स्वयं को निहत्था बताकर अर्जुन को प्रहार करने से रोकने के लिए धर्म की दुहाई दी। यह सुनकर कृष्ण ने उसे फटकारते हुए उसके द्वारा समर्थित दुर्योधन के अधर्म (पाप कर्म) एक-एक करके याद दिलाए, तो लज्जित कर्ण कुछ भी न बोल सका, पर कर्ण का पक्षपाती होकर महाकवि रामधारी सिंह दिनकर ने कर्ण से उत्तर दिलवाते हुए लिखा-

सुयोधन था खड़ा कल तक जहाँ पर,
न हैं क्या आज पाण्डव ही वहाँ पर?
उन्होंने कौन सा अपधर्म छोडा?
किये से कौन कुत्सित कर्म छोडा?
शिखण्डी को बनाकर ढाल अर्जुन,
हुआ गांगेय का जो काल अर्जुन,
हुआ सात्यकि बलि का त्राण जैसे,
गये भूरिश्रवा के प्राण वैसे,
कथा अभिमन्यु की तो बोलते हैं,
नहीं पर, भेद यह क्यों खोलते हैं?
कुटिल षड्यंत्र से रण से विरत कर
महाभट द्रोण को छल से निहत कर
पतन पर दूर पाण्डव जा चुके हैं,
चतुर्गुण मोल बलि का पा चुके हैं।
रहा क्या पुण्य अब भी बोलने को,
उठा मस्तक, गरज कर बोलने को।

जबकि महाभारत के अनुसार ये वचन भीम की गदा से घायल होकर गिरे हुए दुर्योधन ने कृष्ण को कहे थे कि तुमने हमारे योद्धाओं को छल से मारा, तो वहाँ भी कृष्ण ने कर्ण की तरह उसके पापों का दर्पण दिखाया था।

इसी तरह कोई लेखक मरणासन्न दुर्योधन के पास गये युधिष्ठिर से अपना अपराध स्वीकार करवाते हुए लिखता है कि पाण्डवों के लोभ के कारण ही महाभारत का विनाशकारी युद्ध हुआ। जबकि महाभारत में लिखा है कि दुर्योधन को गिराने के बाद भीम ने उसे अपमानित करते हुए उसके सिर पर लात मारी, तो युद्धिष्ठिर ने व्याकुल होकर भीम को ऐसा करने से रोका और दुर्योधन के पास जाकर कहा-

आत्मनो ह्यपराधेन महद् व्यसनमी दृशम्।
प्राप्तवानसि यल्लोभान्मदाद् बाल्याच्च भारत।।
घातयित्वा वयस्यांश्च भ्रातृनथ पितृंस्तथा।
पुत्रान् पौत्रांस्तथा चान्यांस्ततोऽसि निधनं तः।।
तवापराधादस्माभि र्भ्रातरस्ते निपतिताः।
निहता ज्ञातयश्चापि दिष्टं मन्ये दुरत्ययम्।

"भरतनन्दन! तुमने लोभ, मद और अविवेक के कारण अपने ही अपराध से ऐसा भारी संकट प्राप्त किया है। तुमने अपने मित्रों, भाइयों, पितृ तुल्य पुरुषों, पुत्रों और पौत्रों का वध कराकर फिर स्वयं भी मारे गये। तुम्हारे अपराध से ही हम लोगों ने तुम्हारे भाईयों को मार गिराया और कुटुम्बीजनों का वध किया है, मैं इसे दैव का दुर्लङ्घ्य विधान ही मानता हूँ।"

इसके बाद युधिष्ठिर ने दुर्योधन को धन्य इसलिए कहा कि वह तो संसार से चला जाएगा और मैं (युधिष्ठिर) भाइयों और पुत्रों की उन शोक-विह्वला और दुःख में डूबी हुई विधवा बहुओं को कैसे देख सकूँगा।" (शल्य ५९/२४-२८)

यहाँ दुर्योधन ने युधिष्ठिर से कोई उत्तर-प्रत्युत्तर नहीं किया। जबकि दुर्योधन के पक्षपाती लेखक ने दुर्योधन के मुख से कहलवाया- काश! मेरे पिता अन्धे न होते (तो बडा होने के कारण राज्य उन्हीं को मिलता। फिर वही निष्कंटक राज्य मुझे मिलता)। इसमें हमारा यही निवेदन है कि जब कल्पना करने ही चल पडे हैं, तो यह भी कल्पना कर लेनी चाहिए कि काश! पाण्डु पैदा ही न हुआ होता!

हरि मोहन झा ने अपनी पुस्तक 'खट्टर काका' के महाभारत शीर्षक में लिखा है- " खानदान में एक भी नालायक पैदा होने से सम्पूर्ण वंश का नाश हो जाता है। यदि युधिष्ठिर जुआरी नहीं निकलते, तो महाभारत का संहारकारी युद्ध क्यों छिड़ता? --जो अन्याय करता है, सो

अन्त में गल ही जाता है, तभी तो पाण्डव लोग हिमालय में गल गये। युधिष्ठिर के साथ राज-पाट तो गया नहीं, गया एक कुत्ता। भ्रातृ-विरोध से, नर संहार से क्या फल मिला?-- श्रीकृष्ण ने कुरुक्षेत्र में भाई-भाई को, सगे-सम्बन्धियों को आपस में लड़कर कुरुवंश का संहार कर दिया।– अर्जुन उन्हीं के बल पर कूदते थे। --धर्मयुद्ध होता तो पाण्डव लोग कभी नहीं जीतते। लेकिन छलिया कृष्ण ने वैसा नहीं होने दिया।--''

यह ठीक है कि युधिष्ठिर ने जुआ खेला और उसका दण्ड भोगा, पर यह भी सत्य है कि वे जूए के दुर्व्यसनी नहीं थे। महात्मा विदुर को भी उन्होंने कहा था- ''द्यूत में सदा क्लेश होता है, कोई भी समझदार इसे पसन्द नहीं करता।'' शकुनि से भी कहा- ''राजन्! किसी को ठगना अथवा जुआ खेलना पाप है। इसमें कोई क्षत्रियोंचित बल का परिचय नहीं मिलता और न ही यह धर्मनीति है। आप इसे क्यों पसन्द करते हैं।'' इसे ललकार मानकर ही युधिष्ठिर ने जूआ खेला था। दूसरी बार जूआ खेलने के लिए बुलाने गये प्रतिकामी को युधिष्ठर ने जूआ खेला था। दूसरी बार जूआ खेलने के लिए बुलाने गये प्रतिकामी को युधिष्ठिर ने कहा- ''मैं जानता हूँ कि ऐसा करने से वंश का नाश हो जाएगा। फिर भी मैं अपने बूढे (ताऊ-धृतराष्ट्र) की आज्ञा का उल्लंघन नहीं कर सकता।'' (सभा पर्व ७६-४)

प्रबुद्ध पाठक! क्या जूए के मूल में पाण्डवों की समृद्धि को देखकर उत्पन्न हुई दुर्योधन की ईर्ष्या नहीं थी और क्या उस धन सम्पदा को पाने के लिए दुर्योधन ने जुआ खेलने का हठ नहीं किया था? जिस प्रकार ये लेखक जूए का दोष दिखाकर धर्मात्मा युधिष्ठिर को नालायक सिद्ध करने पर तुले हैं वैसे ही महान क्रांतिकारी वीर सावरकर के माफीनामे को उछालकर उनके त्याग और बलिदान को समाप्त करने की धृष्टता भी कर रहे हैं। राजस्थान के बच्चे वर्षों से वीर सावरकर को वीर क्रांतिकारी पढ़ते आ रहे थे, अब सरकार बदली तो उनके नाम से 'वीर' शब्द हटा दिया गया और यह विशेषकर लिखा गया कि उन्होंने अंग्रेजों से माफी माँगी थी। देशभक्तों के प्रति घृणित राजनीति ने पुराने घाव फिर हरे कर दिये। जो लोग स्वतंत्रता के ६५ वर्ष बाद भी अलीगढ़ के मुस्लिम विश्वविद्यालय से भारत के टुकड़े करने वाले जिन्ना का चित्र नहीं हटा पाये, उन्होंने २००३ ई० में संसद भवन में भारत-भक्त सावरकर का चित्र लगाने का जोरदार विरोध किया था।

यदि गाँधी जी अंग्रेजों की सहायता कर उनसे 'केसर-ए-हिन्द' का सम्मान ले लें; अंग्रेजों की मुसीबत देखकर अपने आन्दोलन बन्द कर दें; अंग्रेजों से समझौते कर लें; क्रान्तिकारी देशभक्तों का विरोध करें तो भी न केवल उनका महात्मापन बना रहता है अपितु उन्हें स्वतंत्रता संग्राम का विजेता प्रचारित कर राष्ट्रपिता भी बनाया जाता है और वीर सावरकर किसी रणनीति के अन्तर्गत माफीनामा लिखते हैं तो उन्हें कायर कहकर लाँछित किया जाता है। जबकि वह माफीनामा अंग्रेजों ने कभी स्वीकार नहीं किया और वीर सावरकर को लगभग दस वर्ष अण्डेमान काला पानी में (जेल में) अमानवीय यातनाएँ दीं। बाद में ४ वर्ष भारत की जेलों में रखा और उसके बाद भी १३ वर्ष नजरबन्दी में रखा। जबकि भारतीय कम्युनिस्ट आन्दोलन के जनक व लेनिन के मित्र एम०एन०राय (कानपुर षड्यंत्र केस में १२ साल की कैद की सजा) के माफीनामे पर सरकार बहादुर ने बडी दयालुता के साथ विचार किया और ४ साल १० महीने ११ दिन सजा काटने के बाद उन्हें रिहाई मिल गई। उन एम०एन०राय (मानवेन्द्र नाथ रायल को किसी ने कायर नहीं कहा, क्योंकि वे कम्युनिस्ट थे।

जिस अंग्रेज हुकूमत ने सावरकर के बड़े भाई बाबाराव की पत्नी के मर जाने के बाद भी काले पानी की जेल में बन्दी दोनों सावरकर बन्धुओं को घर जाने की अनुमति नहीं दी थी, उसी हुकूमत ने कमला नेहरू के बीमार पड़ने के बाद जवाहर लाल नेहरू को सजा पूरी होने से पहले सिर्फ छोड़ ही नहीं दिया था, बल्कि उनका इलाज करवाने के लिए विदेश जाने की अनुमति भी दी थी। फिर भी देश ने वीर जवाहर जिन्दाबाद' बोला और सावरकर के नाम से 'वीर' शब्द हटा दिया। विनायक दामोदर सावरकर जन्म से मृत्यु पर्यन्त वीर रहे, यह अगले लेख में दर्शाया जाएगा।

❑❑

वेद और नारी गौरव

(रामनिवास ग्रणग्राहक, पुरोहित आर्य समाज, सागरपुर, दिल्ली)

वेद समस्त ज्ञान-विज्ञान के मूल स्रोत होने के साथ ही भारतीय संस्कृति और सभ्यता के आधार भी हैं। हमारी विश्ववारा संस्कृति वैदिक संस्कृति के नाम से जानी जाती है। जहाँ तक नारी के गुण-गौरव का प्रश्न है, वेद के अतिरिक्त संसार के किसी भी ग्रन्थ में उसे समग्रता व सच्चाई के साथ प्रस्तुति नहीं मिली। बाहर की तो बात ही क्या करें भारतीय ग्रन्थागार में ऋषि ग्रन्थों के अतिरिक्त मध्यकाल से लेकर आज तक जो भी ग्रन्थराशि रचना में आई है, वह भी नारी के साथ न्याय नहीं कर सकी। कहीं किसी में कदाचित् गुणगान दिखता भी है तो.... "किमेकद्वारं नरकस्य? नारी।" और 'अवगुण आठ सदा उर रहहि' जैसी भाव ग्रन्थियों से वह किसी न किसी रूप में विद्रूपित ही दिखा है। वेदों में सर्वत्र नारी का उदात्त एवं उज्ज्वल स्वरूप ही मिलता है, साथ ही उसके महिमा मण्डित होने या करने का कारण भी संलिष्ट दृष्टिगोचर होता है। वेदों को वेदों की दृष्टि से न देखकर अपनी ही दृष्टि से देखने वाले कुछ महानुभाव कतिपय स्थलों को लेकर कुछ भ्रन्तियाँ भी खड़ी करते हैं- जैसे- अथर्ववेद के ६.११.३० और ८.६.१५ को देखकर कन्या जन्म की अनिच्छा, ऋग्वेद ८.३३.१७ व १०.६५.१५ को देखकर नारी की हीन अवस्था या उसके प्रति उपेक्षा, ऋक्. १०.१४५ तथा अथर्व. ३.१८ से बहुपत्नी प्रथा के संकेत, अथर्व० १४.१.६१ और १४.२.१४ को देखकर बहु-भर्तृत्व आदि की कल्पनाएँ प्रस्तुत करते हैं। कल्पनाएँ कोई सीमा नहीं स्वीकारतीं, कुछ सज्जनों ने ऋक् १.१२६.३ और ८.१६.३६ में दासी प्रथा ढूँढ निकाली, तो कुछ आगे बढ़कर सतीप्रथा जैसी क्रूर एवं जघन्य प्रथा के लिए जाने-अनजाने वेदों के साथ खिलवाड़ कर बैठे। ऋग्वेद के मन्त्र **'आरोहन्तु जनयो योनिमग्रे'** (१०-१८-७) में शब्द 'अग्रे' को 'अग्ने' कहने व करने में भी संकोच न करना वेदों के साथ खिलवाड़ नहीं तो क्या है। इन भ्रान्तियों व कल्पनाओं का सतर्क एवं सप्रमाण प्रत्याख्यान इस लघु लेख में सम्भव नहीं, लेकिन इतना अवश्य कहेंगे कि अन्य मानवीय ग्रन्थों की तरह वेदों में कहीं भी एक स्थान पर कुछ कहकर अन्यत्र उसके विरुद्ध बातें लिखने जैसे वदतो व्याघात दोष नहीं हैं। वेदों में सर्वत्र नारी को पुरुष की अपेक्षा श्रेष्ठता प्रदान की है। नारी के कन्या, वधु वा पत्नी तथा माता ये तीन रूप है, वेद के आलोक में इन तीनों स्वरूपों पर संक्षेप में विचार करते हैं।

कन्या :- कन्या का धात्वर्थ ही चमकीला होता है। कुछ इसकी व्युत्पत्ति करते हुए कहते हैं- 'कं सुखं न्यस्ति अस्ति यस्य स्वभावे सा कन्या' अर्थात् जो स्वभावतः सुखी या जिसके स्वभाव में ही सुख है, वह कन्या है। अथर्ववेद १०.३ में संसार की विभिन्न वस्तुओं व पदार्थों के श्रेष्ठ अंश व उत्तम यश को आत्मसात करने की प्रार्थनाएँ हैं, २०वें मन्त्र में 'यथा यशः कन्यानां...' कहकर कन्या जैसा सुयश पाने की इच्छा प्रकट की है। एक दूसरे स्थान पर-'कन्यायां वचो यद् भूमे तेनास्मां अपि संसृज' यानि हे मातृभूमि! तू मुझे कन्या जैसी तेजस्विता प्रदान कर, जैसी प्रार्थनाएँ कन्या रूप में नारी की उच्चता,

महानता व कमनीयता को प्रकट कर रही हैं। वेदों को वेदों की ही दृष्टि से देखने वाले, नारी शिक्षा के प्रबल एवं प्रथम पोषक, स्त्री को वेद पढ़ने एवं यज्ञ जैसे श्रेष्ठतम् कर्म करने का गौरवास्पद अधिकार देने वाले महर्षि देव दयानन्द सरस्वती महाराज सत्यार्थ प्रकाश में स्त्री शिक्षा के सम्बन्ध में लिखते हैं- "जैसे पुरुषों को व्याकरण, धर्म और अपने व्यवहार की विद्या तो न्यून से न्यून पढ़नी ही चाहिए, वैसे ही स्त्रियों (कन्याओं) को भी व्याकरण, धर्म, वैद्यक, गणित और शिल्प विद्या अवश्य ही सीखनी चाहिए।" वेद पुत्रियों के विवाह की आयु न्यूनतम् १६ और अधिकतम् २४ मानता है, और पुरुषों की न्यूनतम २५ व अधिकतम् ४८ वर्ष। विचारणीय है कि महर्षि के अनुसार पुरुष (युवक) २५ वर्ष में व्याकरण धर्म और स्व-व्यवहार (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यादि) की विद्या पढ़े और कन्याएँ मात्र १६ वर्ष में व्याकरण, धर्म, गणित, वैद्यक एवं शिल्प विद्या को आत्मसात करें, यही कन्याओं का श्रेष्ठ यश व उत्तम वर्चस्व है।

वधु व पत्नी :- ऋग्वेद ३.५३.४ में कहा है 'जाया इद् अस्तम्' अर्थात् पत्नी ही घर है। महर्षि व्यास महाभारत में लिखते हैं -'न गृहं गृहमित्याहुः गृहिणी गृहमुच्यते" (१२.३६४.३) कन्या जब पति का वरण करके वधु या पत्नी का रूप धारण करती है, तो परिवार की धुरी बन जाती है। अथर्ववेद १४वें काण्ड में दूसरे सूक्त के कुछ मन्त्र पुत्री की विदाई बेला में माता-पिता द्वारा आशीर्वाद व उपदेशों के मनोहारी भाव व्यक्त करते हैं- 'हे पुत्री। तू पतिगृह जाकर पति, देवर व पशुओं को कष्ट न देना, प्रभु की उपासना और विद्वानों का सत्कार करना।" (१८वाँ मन्त्र) २४वें मन्त्र में कहा है- 'मृगछाला पर बैठकर पति के साथ यज्ञ करना, यज्ञ से रोगकृमि नष्ट होकर उत्तम सन्तान होती है।" वेदोक्त धर्मानुष्ठानों में कुछ संस्कारों को छोड़कर सभी यज्ञों में पत्नी को दक्षिण बाजू में (दाहिनी ओर) बिठाने का विधान है, वामांग नहीं।

वेद पत्नी को पति से अधिक गौरव क्यों देता है, यह जानने के लिए महर्षि व्यास के ये वचन पर्याप्त हैं- 'भार्यां पतिः सम्प्रविश्य स यस्माज्जायते पुनः"। (महा० १.६८.३६) अर्थात् पत्नी में वीर्य रूप में प्रविष्ट होकर पति ही उससे दुबारा जन्म लेता है। महर्षि याज्ञवल्क्य शतपथ ब्राह्मण ५.२.१.१० में ऐसा ही लिखते हैं, एतरेय उपनिषद् भी इसे प्रमाणित करती है। ये नारी के गौरव का उच्चतम् मानबिन्दु है, तभी तो वह इस अलभ्य गौरव से अभिभूत होकर घोषणा करती है- 'अहं केतुरहं मूर्धा....' (ऋक्. १०.१५९.२) मैं मानवता का झण्डा (सम्मान का प्रतीक) हूँ, मैं मानवता का सिर हूँ। गहराई से विचार करें तो नारी की दुर्गति ही समाज की दुर्गति है, इसका गौरव ही मानवता का गौरव है। हे नारी, प्रकृति ने तुझे विलक्षण शक्ति दी है, अब तेरे सामने कोई बाहरी बाधा नहीं है, तू अपनी आन्तरिक सृजन सामर्थ्य को जगाकर, अपने नारीत्व को मातृत्व में ढालकर पथ भटकी मनुजता को सही दिशा दे।

माता निर्माता भवति - हे नारी! कन्या के रूप में तेरी शिक्षा-दीक्षा, तेरी चमक, तेरा वर्चस्व, तेरा सुखी व सुखद स्वभाव-पत्नी बनकर पतिगृह के सभी जनों व पशुओं को सब भाँति सुख-सन्तोष प्रदान करने के लिए है। तेरे पत्नीत्व की सार्थकता मातृत्त्व में निहित है, ये बात व्यास आदि ऋषियों के वचनों से संसिद्ध है। 'पञ्चायतन-पूजा' में पत्नी को जो पाँचवा स्थान मिलता है, माँ बनते ही वह प्रथम स्थान की अधिकारिणी बन

जाती है। 'गुरुणां माता गरीयशी' जैसे वचन माँ के गौरव को चमका देते हैं। ध्यान रहे, सन्तान को जन्म देकर नारी जननी बनती है, माँ नहीं, माता का गौरव प्राप्त करने के लिए उसे पुत्र-पुत्रियों के स्वभाव और चरित्र निर्माण की कला सीखनी होगी, जिसकी आज के युग में महती आवश्यकता है। आज मानव मात्र का हृदय ईर्ष्या द्वेष के दावानल से झुलस रहा है, दूसरी ओर विश्व बारूद के ढेर पर बैठा हुआ किसी चिनगारी की प्रतीक्षा कर रहा है। सारा विश्व पुत्र-रूप में मातृत्त्व का वास्ता देकर नारी समुदाय के सामने वेद के स्वर में एक करूण पुकार कर रहा है- हे करुणामयी जलवत् शुद्धि एवं शान्तिप्रद माताओ! हमारे अन्दर जो निन्दित दुर्गुण हैं, उन्हें दूर करो, जो द्वेष व मिथ्या भाषणादि दोष हैं, सज्जनों के प्रति दुर्वचन कहने रूप जो अपराध हैं, उन्हें अपनी पवित्रताओं से नष्ट कर दो।" (यजुर्वेद ६.१७) माँ! तनिक हृदय के कानों से सुनो तो मानवता आपको आर्त स्वर से पुकार कर कहती है- "अव्यक्त विद्याओं को समझाने में कुशल, अध्यापन कार्य में निपुण, सद्विद्या से प्रदीप्त करने वाली विदुषी माँ! हमारे जीवन अप्रशस्त (निन्दित) से हो गए हैं, सदुपदेश के द्वारा हमें प्रशस्ति (प्रशंसा) प्रदान कर"। (ऋ. २.४१.१६)।- "हे उषा के समान जगाने वाली माँ! तुम हमें सन्मार्ग पर चलने के लिए प्रबुद्ध करो। तुम हमें सौभाग्य के लिए नियमनिष्ठ बनाओ। हमें सुयश व ऐश्वर्य प्रदान करो, हे मानुषी माँ! तुम मरणधर्मा मनुष्यों के मध्य कीर्तिवान करो।" (ऋ. ७.७५.२)

हे विश्व-वन्द्य माते! सुना तुमने पुत्रों का करूण-क्रन्दन! हृदय में उमड़ते वात्सल्य के सागर को हमारे लिए बहा दो न! माँ को पुत्र से अधिक प्रिय क्या हो सकता है भला, ममतामयी माँ के हृदय में संकल्प उठ रहा है कि मैं अपने पुत्रों को विनाश से अवश्य ही बचाऊँगी। मैं जननी से माँ बनूँगी, मैं स्वपुत्रों के हृदय से सारे दोष, दुर्गुण और दुरितों को नष्ट करके उसे सद्गुण, सद्विचार, सेवा व सहयोग की भावना के साथ शीलता व सदाचार का पाठ पढ़ाऊँगी। वेद तुम्हारा मार्ग-दर्शन कर रहा है, वेद माँ के लिए कुछ मर्यादाएँ नियत करता है, ऋग्वेद कहता है-

'अधः पश्यस्व मोपरि सन्तरां पादकौ हर।
मा ते कशप्लकौ दृशन् स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ।
(८.३३.६)

हे नारी! तू नीचे दृष्टि रख, ऊपर नहीं, पैरों को सम्यक गति दे। ऐसे वस्त्र पहन कि तेरे अंग-प्रत्यंग दिखें नहीं (यहाँ पर्दा प्रथा नहीं, अश्लील अंग प्रदर्शन का निषेध है।) क्योंकि स्त्री ब्रह्मा होती है। वेद नारी को युद्ध क्षेत्र में भी भेजता है, वेद नारी को न्यायासन पर भी बिठाता है, शिक्षिका के रूप में भी प्रस्तुत करता है, कोई क्षेत्र ऐसा नहीं, जिसमें नारी अपनी उपस्थिति से वञ्चित रखी हो, मगर आज उसके मातृत्व की आवश्यकता सबसे अधिक है। नारी समय की इस आवश्यकता को समझे, शेष सब कार्य तो उसके बिना भी चल सकते हैं लेकिन सन्तान का चरित्र निर्माण परमात्मा ने केवल नारी को ही सौंपा है, उसे सबसे अधिक गौरव यही दिलाता है। इस कार्य के बिना संसार का हर कार्य, हर प्रगति उपलब्धि अपने आप में कोई महत्त्व नहीं रखती। यह एक ही कार्य नारी को पूर्णता प्रदान करा देता है, उसके गौरव को गगनचुम्बी बना देता है, इसकी अवहेलना करके नारी चाहे कुछ भी प्राप्त कर ले, लेकिन वह परमात्मा प्रदत्त इस दिव्य शक्ति को कुण्ठित करके अपना अपमान और मानवता के साथ अपराध करती रहेगी।

❑❑

"देशभक्त, त्यागी एवं बलिदानी अद्वितीय परमवीर वीर सावरकर"

देश की आजादी में वीर सावरकर का अद्वितीय योगदान है। वह ऋषि दयानन्द के भक्त व क्रान्तिकारी के आद्य आचार्य पं० श्यामजी कृष्ण वर्मा के शिष्य थे। लन्दन में रहकर उन्होंने कानून की पढ़ाई की और इसके साथ ही देश की आजादी के लिए क्रान्तिकारी गतिविधियों से भी जुडे और महनीय कार्य किये। इसका परिणाम यह हुआ कि उन्हें लन्दन में गिरिफतार किया गया और उन पर मुकदमा चला कर उन्हें दो जन्मों के कारावास की सजा दी गई। यह आश्चर्य है कि यह सजा अंग्रेजों ने दी थी। यह अंग्रेज ईसाई थे और इनका धर्मग्रन्थ व धार्मिक मान्यतायें दो जन्मों व पुनर्जन्म के सिद्धान्त को नहीं मानते। वीर सावरकर जी ने लगभग १० वर्ष कालापानी अर्थात् पोर्टब्लेयर की जेल में बिताये जहां इन पर अमानुषिक अत्याचार किये गये। हमारा सौभाग्य है कि हमें पोर्टब्लेयर स्थित कालापानी वा सेलुलर जेल में जाने का अवसर मिला और हमने उनका वह कमरा जिसमें वह रहते थे उसे भी देखा है। उन्हें न केवल कोल्हू में बैल की जगह स्वयं जुतकर तेल निकालना पड़ता था अपितु वहां का जेलर इन्हें कोडों से पिटाई आदि की यातनायें भी देता था। सेलुलर जेल में प्रतिदिन रात्रि समय आयोजित लाइट एण्ड साउण्ड शो को देखकर हृदय कांपने लगता है और आंखे गीली हो जाती हैं। वीर सावरकर जी ने कालापानी की जेल में रहते हुए अनेक यातनायें सहीं। उनका बलिदान स्वर्ण-अक्षरों में लिखने योग्य है। आज उन्हें बदनाम करने के लिये कुछ राजनीतिक दलों को देखकर दुःख होता है। ऐसे लोग निहित राजनीतिक स्वार्थों व भारत विरोधी विदेशियों शक्तियों के इशारे पर हमारे देश के कुछ महापुरुषों को बदनाम करने के लिये ऐसा करते रहते हैं। ऐसे लोगों की निन्दा ही की जा सकती है। जो लोग कभी देश के लिये एक दिन भी आज की आरामदायक जेल में भी नहीं रहे, वह वीर सावरकर जी की आलोचना करें तो निश्चय ही वह निन्दा के पात्र हैं। हमने अपने गुरु प्रा० श्री अनूपसिंह जी से कई बार सुना था कि इंग्लैण्ड में भारत के युवाओं को जो कानून की पढाई करते थे, उन्हें परीक्षा में पास होने पर भी शेष जीवन में अंग्रजों के प्रति वफादार रहने की शपथ लेनी पडती थी। वीर सावरकर जी ने उत्तीर्ण होने पर भी शपथ नहीं ली जिस कारण इन्हें कानून की उपाधि नहीं मिली थी जबकि देश के अन्य कुछ प्रसिद्ध नेताओं ने शपथ ली थी और इन्हें डिग्री प्रदान की गई थी।

वीर सावरकर जी ने जेल से छूटकर रत्नागिरी में नजरबन्द रहते हुए वहां भी समाज सुधर सहित दलितोद्धार के कार्य किये। वीर सावरकर जी की नेताजी सुभाषचन्द्र बोस जी से भी भेंट हुई थी और सावरकर जी ने ही उन्हें देश से बाहर जाकर देश को आजाद कराने की प्रेरणा दी थी। इस अवसर का एक चित्र बहुत पहले आर्यजगत के एक विशेषांक में इसके प्रसिद्ध सम्पादक पं० क्षितीज वेदालंकार जी ने प्रकाशित किया था। वीर सावरकर जी का यह योगदान कुछ कम महत्वपूर्ण नहीं था। वीर सावरकर जी ने हिन्दुओं को संगठित करने व उन्हें भावी खतरों से भी सावधान किया था। उन्होंने अनेक पुस्तके

लिखी हैं जिनमें से हमने कुछ पढी हैं। मोपला विद्रोह एवं गोमांतक उपन्यास ग्रन्थ पढने योग्य हैं। उनका एक अन्य महत्वपूर्ण ग्रन्थ सन् १८५७ के प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम का इतिहास है जिसे पढ़कर आजादी के इस आन्दोलन का सत्य इतिहास जानने को मिलता है। हमें इस ग्रन्थ को पढ़कर आश्चर्य हुआ कि लन्दन में बैठकर वहां के ग्रन्थालयों से कैसे वीर सावरकर जी ने सरकारी रिपोर्टों के आधार पर सामग्री एकत्रित की और एक विशाल एवं प्रामाणिक इतिहास की रचना की। यह भी बता दें कि इस पुस्तक के प्रकाशन से पूर्व ही इस पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया था। इस पर भी देशभक्तों द्वारा इस पुस्तक को किसी प्रकार छुपाकर भारत भेजा गया और यहां अंग्रेजों के शासन काल में ही इसका प्रकाशन हुआ। हमारे देश के अनेक क्रान्तिकारियों ने इस इतिहास से प्रेरणा लेकर देश की आजादी के आन्दोलन में अपना सर्वस्व अर्पण किया था। प्रत्येक देशभक्त नागरिक को इस पुस्तक को अवश्य पढ़ना चाहिये।

वीर सावरकर जी हिन्दू महासभा के प्रधान व उपप्रधान भी रहे। वह हिन्दुओं को संगठित करना चाहते थे। मुगलकाल में हिन्दुओं को जिस धर्मच्युत करने और अपमानित अवस्था से गुजरना पड़ा। उसका कारण हिन्दुओं का असंगठन एवं धार्मिक व सामाजिक अन्धविश्वास, कुरीतियां व कुप्रथायें आदि थी। जन्मना जातिवाद भी असंगठन का मुख्य कारण था। इसके विरुद्ध सबसे पहले ऋषि दयानन्द के अनुयायियों ने दलितोद्धार को अपना मिशन बना लिया था जिसके उनके उदाहरण इतिहास में मिलते हैं। डॉ० अम्बेडकर जी को ऋषि के एक अनुयायी ने ही छात्रवृत्ति देकर इंग्लैण्ड अध्ययन करने के लिये भेजा था। आर्यसमाज के एक विद्वान पं० कुशलदेव शास्त्री जी ने डॉ० अम्बेडकर और आर्यसमाज विषयक एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ की रचना भी की है जो कि पठनीय है। वीर सावरकर जी ऋषि दयानन्द जी के प्रशंसक थे। उन्होंने कहा है कि जब तक ऋषि दयानन्द जी का लिखा हुआ सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ धरती पर मौजूद है, कोई मत व उसका आचार्य अपने मत-मजहब की शेखी नहीं बघार सकता।

वीर सावरकर जी और उनके परिवार ने देश की आजादी के लिये जो कष्ट सहन किये हैं, उसकी अन्यत्र कोई उपमा नहीं है। जो लोग सत्ता में रहे हैं वा जिन्होंने सत्ता का सुख भोगा है, वह वीर सावरकर जी के साथ न्याय नहीं कर सकते। उनके लिये तो अपने हलके-फुलके नेता ही सबसे महान होते हैं। सावरकर जी की १३६वीं जयन्ती हैं। उनके जीवन की कुल अवधि ८३ वर्षों की रही। उन्हें श्रद्धांजलि देते हुए भारत की प्रसिद्ध गायिका लता मुंगेश्वर जी ने कहा है 'नमस्कार! आज स्वातन्त्र्य वीर सावरकर जी की जयन्ती है। मैं उनके व्यक्तित्व को, उनकी देशभक्ति को प्रणाम करती हूं। आजकल कुछ लोग सावरकर जी के विरोध में बातें करते हैं, पर वह लोग यह नहीं जानते कि सावरकर जी कितने बडे देशभक्त और स्वाभिमानी थे।' भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने वीर सावरकर जी को श्रद्धाजंली देते हुए कहा है -

"We bow to Veer Savarkar on his Jayanti. Veer Savarkar epitomises courage, patriotism and unflinching commitment to a strong India. He inspired many people to devote themselves towards nation building."

इसी के साथ हम वीर सावरकर जी को आज उनकी जयन्ती पर उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व को स्त्रमण कर उन्हें अपनी श्रद्धांजली देते हैं।

❑❑

अपनी आत्मा की आवाज़ के विरुद्ध आचरण करने वाले राक्षस हैं - यजुर्वेद

(कृष्णचन्द्र गर्ग, पंचकूला, दूरभाष : ०१७२-४०१०६७६)

यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय का तीसरा मन्त्र है-

असुर्य्या नाम ते लोका अन्धेन तमसावृताः। तांस्ते प्रेत्यापि गच्छन्ति ये के च आत्महनो जनाः।।

अर्थ - जो लोग अपनी आत्मा का हनन करते हैं अर्थात मन में और, वाणी में और तथा करते कुछ और हैं वे राक्षस हैं, अज्ञान अन्धकार में फंसे हुए हैं। मरने के बाद भी वे गहरे अन्धकारमय जीवन को पाते हैं।

आत्मा की पवित्रता का नाम ही अध्यात्मवाद है और परमात्मा को पाने के लिए आत्मा की पवित्रता का होना परम आवश्यक है। बाहरी दिखावा तो कोरा आडम्बर और पाखण्ड है। यह ब्रह्माण्ड ईश्वर की व्यवस्था से ही चल रहा है। उपरोक्त वेदमन्त्र ईश्वर की व्यवस्था का ही वर्णन कर रहा है। जो व्यक्ति अपनी आत्मा की आवाज के विरुद्ध आचरण करता है वह अपना वर्तमान और भवि-य दोनों को बिगाड़ता है। जो लोग अपनी धौंस से दूसरों की आत्मा की आवाज को दबाते हैं उनके राक्षसपन की सीमा का तो कहना ही क्या।

महर्षि मनु द्वारा लिखित मनुस्मृति के पाँचवें अध्याय का श्लोक है -

अद्भिर्गात्राणि शुद्ध्यन्ति मनः सत्येन शुद्ध्यति।

अर्थ - (शुद्ध) पानी से शरीर शुद्ध होता है और मन सत्य के आचरण से शुद्ध होता है।

जो लोग समझते हैं कि किसी नदी या तालाब में डुबकी लगाने से पाप धुल जाते हैं और जो लोग व्यवहार में झूठ का सहारा लेते हैं उनके लिए महर्षि मनु का यह उपदेश है। सत्य आचरण का अर्थ है जैसा मन में हो वही बोले और उसके अनुसार ही काम करे। झूठ से तो मन मलीन ही होता है।

और भी -नासौ धर्मो यत्र न सत्यम् अस्ति। न तत् सत्यम् यत् छलेनाभ्युपेतम्।।

(महाभारत, उद्योगपर्व, विदुरनीति 3-58)

अर्थ - जहां सत्य नहीं वह धर्म नहीं और जिसमें छल-कपट है वह सत्य नहीं है।

वेद ने तो व्रत करने का ढंग भी यह बताया है कि सत्य का आचरण करने की प्रतिज्ञा करो।

अग्ने व्रतपते व्रतं चरि-यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्। इदम् अहम् अनृतात् सत्यम् उपैमि।।
(यजुर्वेद 1-5)

अर्थ - हे ज्ञानस्वरूप, सब व्रतों के पालक प्रभु! मैं यह व्रत करता हूँ कि असत्य के आचरण को छोड़कर सत्य का आचरण अपनाऊँ। आपकी कृपा से मेरा यह व्रत पूर्ण हो, सफल हो।

साध्वी प्रज्ञा ठाकुर ने अपनी आत्मा की आवाज से ही कहा था 'नथूराम गौडसे देशभक्त था, है और रहेगा'। प्रज्ञा ठाकुर का यह ब्यान सत्य पर आधारित है। नथूराम गौडसे अन्दर-बाहर पूर्ण रूप से देशभक्त था। उसने जिस आदमी को मारा था वह हिन्दुओं का, सत्य का, अहिंसा का, मानवता का और रा-ट्र का हत्यारा था। नथूराम गौडसे ने अपने मुकदमे के दौरान अदालत में अपने लिखित लम्बे ब्यान में गान्धी के 150 ऐसे कारनामे बताए थे जो रा-ट्र के लिए घातक थे। उस समय की भारत सरकार ने सत्य को देश की

जनता से छुपाने के लिए नथूराम गौडसे के उस ब्यान को प्रकाशित करने पर पाबन्दी लगा दी थी।

नथूराम गौडसे तथा अन्य आरोपियों की अपील पंजाब हाईकोर्ट में हुई। वहां तीन जजों ने सुनवाई की। उनमें एक थे जज गोपाल दास खोसला। जज गोपाल दास खोसला ने बाद में एक पुस्तक लिखी "The Murder of the Mahatma" अर्थात 'महात्मा का कत्ल'। उस पुस्तक में उन्होंने लिखा है - "I have no doubt that had the audience of that day been constituted into a jury – they would have brought in a vrdict of not guilty by an overwhelming majority." अर्थ - "मेरे मन में इस बात का कोई सन्देह नहीं है कि उस दिन अदालत में बैठे लोगों को अगर ज्यूरी बना दिया जाता तो बहुत बड़े बहुमत से उनका निर्णय होता कि नथूराम गौडसे निर्दो-ा है"।

गान्धी के देशद्रोह और हिन्दू विरोधी कारनामे - मजहब के आधार पर भारत का बंटवारा हुआ। फिर भी गान्धी ने हठ किया कि जो जहां रहता है वहीं रहे। इस कारण से आबादी की अदला-बदली ठीक ढंग से न हो सकी। और कई लाख निर्दो-ा लोग - ज्यादातर हिन्दू मारे गए। और भी, गान्धी ने मुसलमानों को पाकिस्तान जाने से रोका जो अब भारत के लिए नासूर बने हुए हैं। गान्धी अपनी प्रार्थना सभाओं में हिन्दुओं को आदेश देते थे कि मुसलमान उन्हें जान से भी मार दें तो भी हिन्दू उनका विरोध न करें। पाकिस्तान में मुसलमानों द्वारा मारे जा रहे हिन्दुओं को गान्धी उपदेश देते थे कि वे भारत न आएं और वहीं पर मर जाएं। गान्धी का झूठा आश्वासन 'पाकिस्तान मेरी लाश पर बनेगा' पाकिस्तान में रह रहे बहुत से गान्धी भक्तों की मौत का कारण बना। मुसलमानों द्वारा हिन्दुओं पर होते अत्याचारों को देखकर भी गान्धी चुप रहते, या उन्हें छुपाने की कोशिश करते या फिर उन हत्यारे मुसलमानों का ही पक्ष लेते।

पाकिस्तान से जान बचाकर आए हिन्दू शरणार्थी जो दिल्ली में मस्जिदों में ठहरे हुए थे, जनवरी 1948 की कड़कती ठण्ड में गान्धी ने भूख हड़ताल की धमकी देकर उन्हें मस्जिदों से बाहर निकालकर ही दम लिया। चुनाव जीतकर कांग्रेस के अध्यक्ष बने सुभा-ा चन्द्र बोस को गान्धी ने काम नहीं करने दिया, तो उन्हें त्यागपत्र देना पड़ा। गान्धी महाराणा प्रताप, शिवाजी, गुरु गोबिन्द सिंह की निन्दा करते थे, उन्हें गलत मार्ग पर चलने वाले बताते थे। गान्धी ने स्वतन्त्र भारत के नेताओं को रा-ट्र-घातक सलाह दी थी कि देश को सेना की आवश्यकता नहीं है, अहिंसा ही देश की रक्षा करेगी। गान्धी ने हिन्दी के स्थान पर हिन्दुस्तानी (हिन्दी-उर्दू मिश्रित) को रा-ट्रभा-ा बनाने की वकालत की थी। गान्धी ने मुसलमानों के खिलाफत आन्दोलन में हिन्दुओं को घसीटा जिसके परिणाम स्वरूप मालावार, केरल में मुसलमानों ने हिन्दुओं पर अथाह अत्यचार किए। सन् 1946 में बंगाल में एक मुसलमान सुहरावर्दी मुख्यमंत्री था। उसके समय में नोआखली, बंगाल में मुसलमानों ने हिन्दुओं का कत्लेआम, आगजनी, बलात्कार तथा हिन्दुओं को तलवार के जोर से मुसलमान बनाना आदि बड़े पैमाने पर किया। गान्धी ने वहां जाकर सुहरावर्दी की भर्त्सना करने की बजाए उसे 'शहीद साहब' कहकर सम्मानित किया। गान्धी भारत के राजनीतिक पटल पर लगभग 32 व-ा रहे। उन बत्तीस व-ाों में गान्धी ने मुसलमानों की खुशामद की, उन्हें हिन्दुओं के विरुद्ध उकसाया, उनकी उचित-अनुचित मांगों के आगे सिर झुकाया और हिन्दुओं को कायर, कमजोर, दब्बू बनाया

शेष पृष्ठ २० पर

आत्मा और परमात्मा का सम्बन्ध

(भावेश मेरजा, नर्मदा नगर, जिला-भरूच, गुजरात)

आर्य जगत् के २३-२६ सितम्बर २०१२ के अंक में **स्वामी सोम्यानन्द सरस्वती जी** का एक लेख प्रकाशित हुआ है, जिसमें महर्षि दयानन्द जी द्वारा प्रतिपादित वैदिक दार्शनिक सिद्धान्तों के विरूद्ध कई भ्रामक व अस्पष्ट बातें लिखीं गई हैं। जैसे कि -

श्री सोम्यानन्द जी ने अपने लेख के शीर्षक में ही मिथ्या कथन करते हुए लिखा है- "वेदानुसार आत्मा और परमात्मा में अंश और अंशी का सम्बन्ध है।" जबकि वास्तविकता यह है कि वेदानुसार आत्मा (जिसको जीव अथवा जीवात्मा भी कहा जाता है) और परमात्मा में व्याप्य-व्यापक, उपास्य-उपासक, पिता-पुत्र, स्वामी-सेवक आदि का सम्बन्ध है- अंश और अंशी का सम्बन्ध कभी नहीं हो सकता है। महर्षि दयानन्द जी के ग्रन्थों में कहीं पर भी नहीं लिखा गया है कि आत्मा और परमात्मा में अंश और अंशी का सम्बन्ध है। क्या सोम्यानन्द जी महर्षि दयानन्द कृत ग्रन्थों में से कोई ऐसा प्रमाण ढूँढकर प्रस्तुत करने की कृपा करेंगे कि जिसमें आत्मा और परमात्मा में अंश और अंशी का सम्बन्ध बताया गया हो?

वैसे युक्ति से भी आत्मा और परमात्मा में अंशी-अंशी का सम्बन्ध सिद्ध नहीं किया जा सकता क्योंकि अंश कभी नित्य, अनुत्पन्न, अनादि, अविनाशी, शाश्वत, सनातन नहीं हो सकता। अंश कभी न कभी उत्पन्न हुआ होता है। वह सदैव सादि और विनाशी ही होता है। काल के किसी क्षण में जब वह अपने अंशी से पृथक् होता है तभी उसकी अंश के रूप में सत्ता बनती है। जिसका आरम्भ होता है, उसका अंत होता ही है। अब विचार करें कि वेद एवं समस्त वैदिक ग्रन्थों में तो आत्मा (जीव अथवा जीवात्मा) को अनादि चेतन सत्ता के रूप में ही वर्णित किया गया है और चेतन पदार्थ कभी किसी का अंश नहीं हो सकता। अंश सदा अवयवी पदार्थ का होता है। अतः अंश और अंशी का सम्बन्ध केवल और केवल जड़ अथवा प्राकृतिक कार्य पदार्थों में ही सम्भव है। दो चेतन पदार्थों में अंश और अंशी का सम्बन्ध हो ही नहीं सकता। महर्षि दयानन्द जी ने सत्य ही लिखा है- **"जीव उत्पन्न कभी न हुआ, अनादि है।"** (सत्यार्थ प्रकाश, सप्तम समुल्लास) इसी समुल्लास में आगे महर्षि जी ने जीव को **"ब्रह्म से भिन्न, अनादि, अनुत्पन्न और अमृत-स्वरूप"** लिखा है। अतः सोम्यानन्द जी का उक्त कथन कभी मान्य नहीं हो सकता। वैदिक धर्म के संन्यासी को वेद तथा युक्ति-विरुद्ध बातें नहीं लिखनी चाहिए।

दूसरी बात- क्योंकि अंश अंशी से ही पृथक् होकर अस्तित्व में आता है, इसलिए उसमें वही सारे गुण विद्यमान होने चाहिए, जो अपने अंशी में होते हैं। जैसे सेव के टुकड़े में अर्थात् सेव के अंश में वही सारे गुण होते हैं, जो अंशी सेव में होते हैं। इसी आधार पर उस टुकड़े को सेव का अंश माना जा सकता है। हमारे शरीर में जो खून होता है, उसके परीक्षण के लिए डाक्टर सारे खून का परीक्षण नहीं करता है, केवल अल्प मात्रा में खून लेकर उसी का परीक्षण करता है। उस अंश मात्र खून के परीक्षण को ही हमारे सारे खून का परीक्षण मान लिया जाता है। अतः अंश और अंशी में गुणों का साधर्म्य होता है - यह बात सर्वसम्मत है। अब आत्मा और परमात्मा में अंश और अंशी का सम्बन्ध है - ऐसा मानने वाले लोग विचार करें कि क्या आत्मा में वही सारे गुण विद्यमान हैं, जो परमात्मा में हैं? या कुछ वैधर्म्य भी पाया जाता है? महर्षि दयानन्द जी के निम्न मंतव्य हमें सदैव स्मरण रखने चाहिए -

(१) **"जीव और ईश्वर स्वरूप और वैधर्म्य से भिन्न, और व्याप्य-व्यापक और साधर्म्य से अभिन्न हैं।"** (स्वमंतव्यामंतव्य प्रकाश)

(२) **"जहाँ-जहाँ सर्वज्ञादि विशेष हों, वहीं-वहीं परमात्मा और जहाँ-जहाँ इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख,**

दुःख और अल्पज्ञादि विशेष हों, वहाँ-वहाँ जीव का ग्रहण होता है।" (सत्यार्थ प्रकाश, प्रथम समुल्लास)

अपनी मिथ्या कल्पना के समर्थन में सोम्यानन्द जी ने शतपथ ब्राह्मण (ब्रहदारण्यक उपनिषद् ३.७.२२) का **"य आत्मनि तिष्ठन्नात्मनो..."** यह प्रसिद्ध वाक्य उद्धृत किया है। इसी वाक्य की व्याख्या महर्षि जी ने सत्यार्थ-प्रकाश के सप्तम समुल्लास में लिखी है, जिसमें उन्होंने 'आत्मा' को जीव का पर्यायवाची शब्द माना है और लिखा है - **"जो परमेश्वर आत्मा अर्थात् जीव में स्थित और जीवात्मा से भिन्न है; जिसको मूढ जीवात्मा नहीं जानता कि वह परमात्मा मेरे में व्यापक है।"** यहाँ दयानन्द जी ने आत्मा, जीव और जीवात्मा - ये तीनों शब्द एक ही पदार्थ के लिए प्रयुक्त किये हैं। अन्यत्र भी उनके द्वारा ये शब्द एक ही सत्ता के लिए प्रयुक्त किये गये हैं। जैसे कि -

सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय समुल्लास में न्याय दर्शन के **"इच्छाद्वेष..."** इस सूत्र में सूत्रकार ने 'आत्मा' शब्द का प्रयोग किया है, मगर महर्षि जी ने इस सूत्र की व्याख्या में 'जीवात्मा' शब्द का प्रयोग किया है। फिर अगले वैशेषिक दर्शन के **"प्राणापान..."** इस सूत्र में इसी द्रव्य के लिए 'आत्मा' शब्द का प्रयोग किया गया है। फिर सप्तम समुल्लास में इन्हीं दो सूत्रों की पुनः व्याख्या की गई है, जिनमें 'जीव' और 'जीवात्मा' दोनों शब्दों का प्रयोग महर्षि जी ने एक ही पदार्थ के लिए किया है। इसी प्रकार नवम् समुल्लास में मुक्ति के प्रंकरण में 'मुक्त जीव', 'मुक्ति में जीवात्मा', 'ईश्वर के स्वरूप में जीवात्मा की स्थिति' आदि शब्दों के किये गये प्रयोग से यही सिद्ध होता है कि महर्षि दयानन्द जी की दृष्टि में जीव और जीवात्मा में कोई भेद नहीं है, एक ही पदार्थ या द्रव्य के नाम हैं, और उसी के लिए वे 'आत्मा' शब्द का प्रयोग भी करते हैं। अतः जीव, जीवात्मा और आत्मा - तीनों में कोई तात्त्विक भेद नहीं है। एक ही वस्तु के ये तीनों नाम हैं।

मुंडकोपनिषद् (३.१.९) के **"एषोऽणुरात्मा चेतसा वेदितव्यः"** तथा ब्रहदारण्यक उपनिषद् (४.४.२) में भी 'आत्मा' शब्द का प्रयोग जीव के लिए किया गया है। न्याय दर्शन के भाष्यकार वात्स्यायन मुनि ने ३.२.६२ वें सूत्र के भाष्य में जीव के लिए 'आत्मा' शब्द का प्रयोग किया है। यह भिन्न बात है कि उपनिषद् आदि कई ग्रन्थों में प्रकरण के अनुसार कभी-कभी 'आत्मा' शब्द परमात्मा के लिए भी प्रयुक्त होता है, जिसकी व्युत्पति आधारित व्याख्या सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम समुल्लास में की गई है। अपने लेख में सोम्यानन्द जी ने लिखा है - "जीव में आत्मा परमात्मा का ही व्यापक अंश है।" यह बड़ा ही भ्रामक कथन है। 'जीव में आत्मा' क्या होता है? जीव ही आत्मा है, और परमात्मा उसी में व्यापक है। बस, यही सरल वास्तविकता है।

सोम्यानन्द जी ने आगे लिखा है - "आत्मा और जीव का अनादि सनातन सम्बन्ध है।" जब आत्मा और जीव एक ही सत्ता के दो नाम हैं, तब दोनों में 'अनादि सनातन सम्बन्ध' क्या हो सकता है? हाँ, अगर यहाँ 'आत्मा' का प्रयोग परमात्मा के लिए किया गया हो तो कथन की संगति ऐसे लगायी जा सकती है कि दोनों में अर्थात् परमात्मा और जीव में व्यापक-व्याप्य आदि का अनादि सनातन सम्बन्ध है। मगर सोम्यानन्द जी का अभिप्राय तो भिन्न ही है।

सोम्यानन्द जी ने एक और विचित्र बात लिखी है - "जीव में आत्मा (परमात्मा) व्यापक होने से जीव में चेतनता का गुण व्याप्त रहता है।" क्या सोम्यानन्द जी इतना भी नहीं जानते हैं कि जीव भी एक चेतन अनादि पदार्थ है। वह स्वभाव से ही चेतन है। परमात्मा ने उसे चेतन नहीं बनाया है, परमात्मा ने उसे चेतनता प्रदान नहीं की है। चेतनता जीव का अपना स्वाभाविक गुण है। किसी के द्वारा प्रदान किया गया गुण स्वाभाविक नहीं, बल्कि नैमित्तिक होता है। अतः आपका कथन उचित नहीं है। हाँ, परमात्मा सर्वत्र विद्यमान है, क्योंकि द्रव्य और उसके स्वाभाविक गुण में समवाय सम्बन्ध होता है।

सोम्यानन्द जी ने आगे लिखा है - "जीव और आत्मा (परमात्मा) संयुक्त रूप से अनादि हैं।" यहाँ 'संयुक्त रूप से' का गलत प्रयोग किया गया है, जो निरर्थक है। वास्तव में जीव और परमात्मा - दोनों अनादि हैं। काल की दृष्टि से दोनों समान रूप से अनन्त और नित्य भी हैं।

लेखक ने लिखा है - "अंश और अंशी अविभक्त होने के कारण एक ही है।" यह भी मिथ्या कथन है, क्योंकि अंश अंशी से विभक्त हुए बिना, पृथक् हुए बिना अंश के रूप में आ ही नहीं सकता। परमात्मा अनन्त, अखंडनीय, निरवयव और सर्वव्यापक सत्ता होने से उसके अंश की कल्पना ही निराधार है। उसका तथाकथित अंश अपने सर्वव्यापक अंशी परमात्मा से अपने आप को पृथक् कैसे कर पायेगा? अंश सर्वव्यापक परमात्मा से अलग होकर जायेगा कहाँ? जब अपने आप को परमात्मा से पृथक् ही नहीं कर पायेगा, तो फिर अंश बन ही कैसे सकता है?

सोम्यानन्द जी ने आगे लिखा है - "उपासना जीव परमात्मा की करता है। आत्मा परमात्मा की उपासना नहीं करता।" क्या टिप्पणी करें ऐसी कल्पित बात पर? लेखक को ऐसी ऊटपटांग बातें नहीं लिखनी चाहिए थीं। दर्शन शास्त्रों या कम से कम सत्यार्थ प्रकाश से सहायता ली गई होती तो सम्भवतः ऐसी भूलें नहीं होतीं।

अपने लेख के अंत में सोम्यानन्द जी ने महर्षि दयानन्द के वेद भाष्य के २-३ प्रमाण देकर यह बताने का असफल प्रयास किया है कि आत्मा और परमात्मा में अंशी-अंशी का सम्बन्ध है। वास्तव में दयानन्द भाष्य में ऐसी कोई बात ही नहीं है कि जिससे लेखक की कपोल कल्पित बात सिद्ध हो सके।

आर्य समाज की पत्र-पत्रिकाओं में ऐसी सिद्धान्त विरुद्ध भ्रामक बातें नहीं छपनी चाहिए। सम्पादकों को जागरूक रहने की आवश्यकता है।

❑❑

पृष्ठ १७ का शेष

और उन्हें मुसलमानों के आगे अर्पण करने को मजबूर किया।

दुर्गा दास एक प्रसिद्ध पत्रकार और लेखक थे। उन्होंने एक पुस्तक लिखी है - 'India – From Curzon to Nehru and After' उस पुस्तक में वे लिखते हैं :-

सन 1946 में कांग्रेस ने अविभाजित भारत को पन्द्रह प्रदेशों में बांटा हुआ था। हर प्रदेश में एक कांग्रेस कमेटी थी। उन कांग्रेस कमेटियों को पत्र लिखकर पूछा गया कि स्वतन्त्र भारत का प्रथम प्रधानमंत्री कौन बने। सब ने लिफाफों में बन्द करके अपनी अपनी कमेटी के निर्णय भेजे। उनमें 12 प्रदेश कांग्रेस कमेटियों के निर्णय सरदार बल्लभ भाई पटेल के पक्ष में थे, दो आचार्य कृपलानी के पक्ष में और एक पट्टाभि सीतारमैया के पक्ष में था। नेहरू के पक्ष में कोई एक भी मत न था। फिर भी गान्धी ने प्रजातन्त्र का गला घोटकर वह ताज जवाहर लाल नेहरू के सिर पर रख दिया। जब पत्रकार दुर्गा दास ने गान्धी से पूछा कि बहुमत तो सरदार पटेल के पक्ष में है तो फिर आपने नेहरू को कैसे बना दिया। गान्धी का जवाब था 'नेहरू ज्यादा अच्छी अंग्रेजी बोलता है'। देश के साथ गद्दारी तो यहीं से शुरू हो गई थी। इससे यह भी पता चलता है कि गान्धी कितने बड़े कपटी थे।

निस्सन्देह गान्धी की हत्या करना गलत था। उनकी काट लेखों और भाषणों के द्वारा विचारों से करनी चाहिए थी। गान्धी की हत्या से देश को और अधिक हानि उठानी पड़ी। हत्या से उनके सब बुरे काम ढक गए और वे शहीद माने जाने लगे। भारत तभी तक सुरक्षित है जब तक देश में हिन्दू बहुमत में हैं। इसलिए हिन्दुओं को कमजोर करने वाली गान्धी की नीतियां देश के लिए घातक हैं। देश को गान्धीवाद से बचाने की सख्त जरूरत है। इसलिए हिन्दूहित और रा-ट्रहित के लिए मर मिटने वाला नथूराम गौडसे देशभक्त था, है और रहेगा - इसमें कोई शक नहीं है।

कृष्णचन्द्र गर्ग, 0172-4010679,
kcg831@yahoo.com

❑❑

श्रीराम जी : अनुकरणीय व्यक्तित्व

(महात्मा चैतन्यस्वामी)

आदिकालीन मन जी के सात पुत्र थे जिनकी एक शाखा में महाराजा सगर, सुखमंजस, विरूत, कद्दीप, भगीरथ, अंशुतान, अनरण्य, नहुष, त्रिशंकु, दिलीप, रघु और अज आदि हुए तथा दूसरी शाखा में सत्यवादी हरिश्चन्द्र आदि। वैवस्वत मनु के बाद इस सूर्यवंश की उनलातीस पीढ़ियों के बाद श्री राम जी ने अयोध्या में राजा दशरथ जी के यहां जन्म लिया। श्री राम जी के चरित्र में ऐसे उत्कृष्टतम गुण विद्यमान थे जिनके कारण आज लाखों वर्षों के बाद भी उन्हें घर-घर स्मरण किया जाता है। वास्तव में उनके सभी पूर्वजों का भी अपना अत्यधिक आदर्श जीवन था। इस प्रकार श्री राम में अपने पूर्वजों के ही गुणों का सामूहिक विकास हमें देखने को मिलता है। उनके दिव्य गुणों का प्रमाण हमें महर्षि वाल्मीकि और नारद जी की वार्ता से मिलता है। जब वाल्मीकि जी ने नारद जी से पूछा-

कोन्वस्मिन् साम्प्रतं लोके गुणवान् कश्च वीर्यवान्।
धर्मज्ञश्च कृतश्च सत्यवाक्यो दृढ़व्रतः।।

अर्थात् मुनि राज! इस समय संसार में गुणवान्, धर्मज्ञ, शूरवीर, कृतज्ञ और दृढ़ प्रतिज्ञा वाला मनुष्य कौन है? तो महामुनि नारद जी ने ऐसे व्यक्ति के रूप में श्री राम का ही नाम महर्षि के सम्मुख प्रस्तुत किया था तथा नारद जी से यह सुनने के बाद ही उन्होंने श्री राम पर रामायण महाकाव्य लिखने का निर्णय लिया था। बाल्मीकि जी ने अपने ग्रन्थ में श्रीराम जी को वेद **वेदांगतत्वज्ञः-वेद वेदांग के तत्ववेता और सर्वविद्याव्रतस्नातो यथावत्सांगोवेदवित्-** विद्याव्रत स्नातक तथा यथावत् अंगों सहित वेद का जानने वाला कहा है। यही नहीं वे आगे राम के गुणों के बारे में महाराजा दशरथ से कैकेयी को कहलवाते हैं

क्षमा यस्मिंस्तपस्त्यागः सत्यं धर्मकृतज्ञता।
अप्यहिंसा च भूतानांतमृते का गतिर्मम्।।

अर्थात् हे केकैयी! जिस राम के अन्दर क्षमा, तप, त्याग, सत्य, धर्म और कृतज्ञता तथा प्राणियों के लिए दया है, उस राम के बिना मेरा क्या गति होगी? अन्य अनेक स्थानों पर भी वाल्मीकि जी ने श्रीराम जी को मर्यादित, शरणागत, आस्तिक, धार्मिक और निश्चय बुद्धि वाला कहा है।

यूँ तो रामायण में वर्णित प्रत्येक व्यक्तित्व अपने आप में अद्वितीय एवं अतुलनीय हैं मगर इस महाकाव्य के महानायक श्रीराम जी का आदर्श व्यक्तित्व तो अत्यधिक विलक्षणता से परिपूर्ण है। महाराज दशरथ जी के लिए चारों राजकुमार ही प्रिय थे मगर श्रीराम के प्रति उनका विशेष अनुराग था तथा उस अनुराग का आधार श्रीराम जी का आदर्श व्यक्तित्व ही था। इस अद्भुत व्यक्तित्व का हमें रामायण में अनेक स्थानों पर परिचय मिलता है। अयोध्या काण्ड में उन्हें ब्रह्मा के समान गुणवान् बताया गया है। अन्य गुणों की चर्चा कहते हुए कहा गया है-

स हि रूपोपपन्नश्च वीर्यवाननसूयकः।
भूमावनुपमः सूनुर्गुणैर्दशरथोपमः।। अयो.का. १-७

अर्थात् श्रीराम अत्यन्त रूपवान् महाशक्तिशाली, दुर्गुणों से रहित, पृथिवी पर अनुपम और गुणों में दशरथ ही के समान थे। इसी क्रम में आगे कहा गया है-

स तु नित्यं प्रशान्तात्मा मृदुपूर्वं प्रभाषते।
उच्यमानोऽपि परुषं नोत्तरं प्रतिपद्यते।।
कथचिदुपकारेण कृतेनैकेन तुष्यति।
न स्मरत्यपकाराणां शतमप्यात्मवत्तया।।
सानु काशो जितक्रोधो ब्राह्मणप्रतिपूजकः।
दीनानुकम्पी धर्मज्ञो नित्यं प्रग्रहवांशुचिः।।
सम्यग्विद्याव्रतस्नातो यथावत्सा वेदवित्।
इष्वस्त्रे च पितृः श्रेष्ठो बभूव भरताग्रजः।।

अ.का. ०१-१०, १२

अर्थात् वे सदा प्रसन्नचित रहते और सब से मधुर बोलते थे। यदि कोई उनके प्रति कठोर वचन भी बोलता था तो भी वे प्रत्युत्तर में कोई कठोर बात नहीं कहते थे। श्रीराम किसी प्रकार किए गए एक ही उपकार से सन्तुष्ट हो जाते थे। और किसी ने उनके प्रति सैकड़ों अपकार किए हों तो भी उनका स्मरण न करते थे। वे

दयालु, क्रोध को वश में रखने वाले, ब्राह्मणों का सम्मान करने वाले, दीनों पर दया करने वाले, धर्म को जानने वाले, जितेन्द्रिय एवं पवित्र थे। श्रीराम समस्त विधाओं और ब्रह्मचर्य-व्रत में स्नान किए हुए अर्थात् विद्यास्नातक और व्रतस्नातक थे। वे अंगों सहित वेदों को जानने वाले और बाण-विद्या में अपने पिताजी से भी बढ़कर थे।

श्रीराम जी को राजा बनाने के पक्ष में अयोध्या की परिषद् ने श्रीराम जी के अनेक गुणों का वर्णन किया है। जिनमें से कुछ इस प्रकार विवेचित किए गए हैं-

दिव्यगुणैः शकसमो रामः सत्यपराक्रमः।
इक्ष्वाकुभ्योऽपि सर्वेभ्यो ह्यतरिक्तो विशाम्पते।।
रामः सत्पुरुषो लोके सत्यः धर्मपरायणः।
गुणैर्विरूरूचे रामो दीप्तः सूर्य इवांशुभिः।।

अ.का. ०२-१६ से २६

अर्थात् सत्यपराक्रमी श्रीराम दिव्य गुणों से इन्द्र के समान हो रहे हैं अतः वे इक्ष्वाकुवंशी राजाओं में सबसे श्रेष्ठ हैं। सत्यपरायण श्रीराम लोक में वस्तुतः श्रेष्ठ पुरुष हैं उन्हीं से धर्म और अर्थ को प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है। प्रजा को सुख देने में श्रीराम चन्द्रमा के तुल्य, क्षमा करने में पृथिवी के समान, बुद्धि में बृहस्पति के तुल्य और पराक्रम में साक्षात् इन्द्र के समान हैं। वे धर्मज्ञ, सत्यवादी, शीलयुक्त, ईर्ष्या से रति, शान्त दुखियों को सान्तवना देने वाले, मधुर-भाषी, कृतज्ञ और जितेन्द्रिय हैं। मनुष्यों पर कोई आपत्ति आने पर वे स्वयं दुःखी होते हैं और उत्सव के समय पिता की भांति प्रसन्न होते हैं। श्रीराम सदा सत्य बोलने वाले, महाधनुर्धर, वृद्धों की सेवा करने वाले, जितेन्द्रिय, हंसकर बोलने वाले और सब प्रकार से धर्म का सेवन करने वाले हैं। उनका क्रोध और प्रसन्नता कभी निरर्थक नहीं होती। वे मारने योग्य को मारते ही हैं और अवध्यों पर कभी क्रोध नहीं करते। वे यम-नियमादि पालन में कष्ट-सहिष्णु हैं। प्रजाजनों के प्रीतिपात्र हैं, स्वजनों में प्रीति उत्पन्न कराने वाले हैं। इन गुणों से अलंकृत श्रीराम रश्मियों से युक्त सूर्य की भांति देदीप्यमान हैं। उनका जीवन पूर्णरूप से निस्पृह, मर्यादित और त्यागमय था। उनके वीतराग स्वभाव का सबसे उत्तम उदाहरण हमें उस समय मिलता है जब राज्याभिषेक के स्थान पर उन्हें तुरन्त वन जाने की खबर दी जाती है। उनकी उस समय की स्थिति के बारे में कहा गया है-

आहुतस्याभिषेकाय वनाय प्रस्थितस्य च।
न लक्षितो मुखे तस्य स्वल्पोऽप्याकारविभ्रमः।।

अर्थात् राज्याभिषेक की सुखद आज्ञा से न तो उनके मुख पर प्रसन्नता के चिन्ह दिखाई दिए और राज्य के बदले वनवास की आज्ञा मिलने पर न ही उनके मुख पर विषाद के चिन्ह दिखाई दिए। श्रीराम चन्द्र जी स्वयं इस प्रकार के आदर्श व्यक्तित्व के स्वामी थे इसीलिए अयोध्या का राज्य भी एक आदर्श राज्य था। रामायण के अन्त में रामराज्य का वर्णन करते हुए कहा गया है-

न पर्यदेवन् विधवा न च व्यालकृतं भयम्।
न व्याधिजं भयं चासीद्रामे राज्यं प्रशासति।।
आसन् प्रजा धर्मता रामे शासति नानृताः।
सर्वे लक्षणसम्पन्नाः सर्वे धर्मपरायणाः।।

यु.का. ३८-२५ से ३१

श्रीराम जी के राज्य में न तो विधवाओं का करुण-क्रन्दन था, न सर्पों का भय था और न ही रोगों का भय था। राज्य भर में चोरों, डाकुओं और लुटेरों का कहीं नाम तक नही था। दूसरे के धन को लेने की बात तो दूर रही, कोई छूता तक नहीं था और राम के शासन-काल में किसी वृद्ध ने किसी बालक का मृतक-संस्कार नहीं किया। राम-राज्य में सभी लोग अपने-अपने वर्णानुसार धर्म-कृत्यों में तत्पर रहते थे अत सब लोग सदा सुप्रसन्न रहते थे। श्रीराम दुःखी होंगे इस विचार से प्रजाजन परस्पर एक-दूसरे को दुःख नहीं देते थे। राम-राज्य में लोगों की आयु दीर्घ होती थी और लोग बहुत पुत्रों से युक्त होते थे। सभी अयोध्या निवासी रोग और शोक से रहित दीख पड़ते थे। राम-राज्य में वृक्ष सदा फूलते और फलते रहते थे। उनकी शाखाएं लम्बी होती थीं। वर्षा यथासमय होती थी और सुख-स्पर्शी मन्द समीर चला करती थी। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र कोई भी लोभी प्रवृत्ति का नहीं था। सब लोग अपना-अपना काम करते हुए एक-दूसरे से सन्तुष्ट रहा करते थे। श्रीराम के राज्य में समस्त प्रजा सत्य के साथ रहती थी और झूठ से सर्वदा दूर रहती थी। सब लोग शुभगुणों से युक्त थे और सभी धर्मपरायण होते थे। ❑❑

ब्राह्मणादि ग्रन्थों में यज्ञ का विधान

(संकलन- स्वामी बेदरक्षानन्द सरस्वती, संरक्षक- आर्ष गुरुकुल कालवा)

अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेध, पर्यन्त जो कर्मकाण्ड है, उसमें चार प्रकार के द्रव्यों का होम करना होता है- एक सुगन्ध-गुण-युक्त जो कस्तूरी केशरादि है- दूसरा मिष्ट-गुणयुक्त, जो कि गुड़ और शहद आदि कहाते हैं, तीसरा पुष्टिकारक-गुणयुक्त जो घृत, दुग्ध और अन्न आदि हैं, और चौथा रोगनाशक-गुणयुक्त जो कि सोमलतादि औषधि आदि हैं। इन चारों का परस्पर शोधन, संस्कार और यथायोग्य मिलाके अग्नि में युक्तिपूर्वक जो होम किया जाता है, वह वायु और वृष्टिजल की शुद्धि करने वाला होता है। इससे सब जगत् को सुख होता है। और जिसको भोजन, छादन, विमानादि यान, कलाकुशलता, यन्त्र और सामाजिक नियम होने के लिये करते हैं, वह अधिकांश से कर्त्ता को ही सुख देने वाला होता है। इसमें पूर्वमीमांसा धर्मशास्त्र की भी सम्मति है-

द्रव्यसंस्कारकर्मसु परार्थत्वात्फलश्रुतिरर्थवादः स्यात्।। पूर्वमीमांसा अ.४।पा.३।सू.१।।

द्रव्याणां तु क्रियार्थानां संस्कार क्रतुधर्मः स्यात्।। पूर्वमीमांसा अं. ४। पा. ३। सू. ८।।

एक तो द्रव्य, दूसरा संस्कार और तीसरा उनका यथावत् उपयोग करना, ये तीनों बात यज्ञ के कर्त्ता को अवश्य करनी चाहिये। सो पूर्वोक्त सुगन्धादियुक्त चार प्रकार के द्रव्यों का अच्छी प्रकार संस्कार करके अग्नि में होम करने से जगत् का अत्यन्त उपकार होता है। जैसे दाल और शाक आदि में सुगन्ध द्रव्य और घी इन दोनों को चमचे में अग्नि पर तपाके उनमें छोंक देने से वे सुगन्धित हो जाते हैं, क्योंकि उस सुगन्ध द्रव्य और घी के अणु उनको सुगन्धित करके दाल आदि पदार्थों को पुष्टि और रुचि बढ़ाने वाले कर देते हैं, वैसे ही यज्ञ से जो भाप उठता है, वह भी वायु और वृष्टि के जल को निर्दोष और सुगन्धित करके सब जगत् को सुख करता है, इससे वह यज्ञ परोपकार के लिये ही तो होता है। इसमें ऐतरेय ब्राह्मण का प्रमाण है कि-

यज्ञोऽपि तस्यै जनतायै कल्पते यत्रैवं विद्वान् होता भवति।। ऐ.ब्रा.पं.१। अ.२। ख.१।।

अर्थात् जनता नाम जो मनुष्यों का समूह है, उसी के सुख के लिये यज्ञ होता है, और संस्कार किये द्रव्यों का होम करने वाला जो विद्वान् मनुष्य है, वह भी आनन्द को प्राप्त होता है, क्योंकि जो मनुष्य जगत् का जितना उपकार करेगा, उतना ही ईश्वर की व्यवस्था से सुख प्राप्त होगा। इसलिये यज्ञ का अर्थवाद यह है कि अनर्थ दोषों को हटाके जगत् में आनन्द को बढ़ाता है। परन्तु होम का द्रव्यों का उत्तम संस्कार और होम के करने वाले मनुष्यों को होम करने की श्रेष्ठ विद्या अवश्य होनी चाहिये। सो इसी प्रकार के यज्ञ करने से सबको उत्तम फल प्राप्त होता है। विशेष करके यज्ञकर्त्ता को, अन्यथा नहीं। इसमें शतपथ ब्राह्मण का भी प्रमाण है कि-

अगनेर्वै धूमो जायते धूमादभ्रमभ्राद्वृष्टिरग्नेर्वा एता जायन्ते तस्मादाह तपोजा इति।।

(शत. कां. ५। अ. ३। (ब्रा.४। क्रं. १७)।।

शेष पृष्ठ ३७ पर

जो होम करने के द्रव्य अग्नि में डाले जाते हैं, उनसे धुआं और भाफ उत्पन्न होते हैं, क्योंकि अग्नि का यही स्वभाव है कि पदार्थों में प्रवेश करके भिन्न-भिन्न कर देता है, फिर वे हलके वायु के साथ ऊपर आकाश में चढ़ जाते हैं, उनमें जितना जल का अंश है, वह भाफ कहाता है, और जो शुष्क है, वह पृथ्वी का भाग है, इन दोनों के योग का नाम धूम है। जब वे परमाणु मेघमण्डल में वायु के आधार से रहते हैं फिर वे परस्पर मिलके बादल होके उनसे वृष्टि, वृष्टि से औषधि, औषधियों से अन्न, अन्न से धातु, धातुओं से शरीर और शरीर से कर्म बनता है। इस विषय में तैत्तिरीय उपनिषद् का भी प्रमाण है कि-

'तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः संभूतः, आकाशाद्वायुः, वायोरग्निः, अग्नेरापः, अद्भ्यः पृथिवी, पृथिव्या ओषधयः, औषधिभ्योऽन्नं, अन्नाद्रतः, रेतसः पुरुषः, स वा एषः पुरुषोऽन्नरसमयः।। आनन्दवल्यां प्रथमेऽनुवाके।।

'सतपोऽप्यत स तपस्तप्त्वा अन्नं ब्रह्मेति विजानात् अन्नाद्धयेव खल्वि, मानि भूतानि जायन्ते अन्नेन जातानि जीवन्ति अन्नं प्रयन्त्यंभिसंविशन्तीति'।। भृगुवल्ल्यां द्वितीयेऽनेवाके।।

परमात्मा के अनन्त सामर्थ्य से आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथिवी आदि तत्त्व उत्पन्न हुये हैं, और उनमें ही पूर्वोक्त क्रम के अनुसार शरीर आदि, उत्पत्ति, जीवन और प्रलय को प्राप्त होते हैं। यहाँ ब्रह्म का नाम अन्न और अन्न का नाम ब्रह्म भी है, क्योंकि जिसका जो कार्य है, वह उसी में मिलता है। वैसे ही ईश्वर के सामर्थ्य से जगत् की तीनों अवस्था होती हैं, और सब जीवों के जीवन का मुख्य साधन है, इससे अन्न को ब्रह्म कहते हैं। जब होम से वायु, जल और औषधि आदि शुद्ध होते हैं, तब सब जगत् को सुख और अशुद्ध होने से सबको दुःख होता है। इससे इनकी शुद्धि अवश्य करनी चाहिये।

सो उनकी शुद्धि करने में दो प्रकार का प्रयत्न है- एक तो ईश्वर का किया हुआ, और दूसरा जीव का। उनमें से ईश्वर का किया यह है कि उसने अग्नि रूप सूर्य और सुगन्ध रूप पुष्पादि पदार्थों को उत्पन्न किया है। वह सूर्य निरन्तर सब जगत् के रसों को पूर्वोक्त प्रकार से ऊपर खींचता है और जो पुष्पादि का सुगन्ध है, वह भी दुर्गन्ध का निवारण करता रहता है। परन्तु वे परमाणु सुगन्ध और दुर्गन्धयुक्त होने से जल और वायु को भी मध्यम कर देते हैं। उस जल की वृष्टि से औषधि, अन्न, वीर्य और शरीरादि भी मध्यम गुण वाले हो जाते हैं और उनके योग से बुद्धि, बल, पराक्रम धैर्य और शूरवीरतादि गुण भी निकृष्ट ही होते हैं, क्योंकि जिसका जैसा कारण होता है, उसका वैसा ही कार्य होता है। यह दुर्गन्ध से वायु और वृष्टि जल का दोषयुक्त होना सर्वत्र देखने में आता है। सो यह दोष ईश्वर की सृष्टि से नहीं किन्तु मनुष्यों ही की सृष्टि से होता है। इस कारण से उसका निवारण करना भी मनुष्यों ही की उचित है। जैसे ईश्वर ने सत्यभाषणादि धर्म व्यवहार करने की आज्ञा दी है, मिथ्याभषणादि की नहीं, जो इस आज्ञा से उलटा काम करता है, वह अत्यन्त पापी होता है, और ईश्वर की न्यायव्यवस्था से उसको क्लेश भी होता है, वैसे ही ईश्वर ने मनुष्यों को यज्ञ करने की आज्ञा दी है, इसको जो नहीं करता, वह भी पापी होके दुःख का भागी होता है। क्योंकि

शेष पृष्ठ २६ पर

बौद्धिकता के नाम पर वैचारिक प्रदूषण

(डॉ. विवेक आर्य)

हमारे देश में एक विशेष जमात हमारी परम्पराओं और धार्मिक मान्यताओं पर निरंतर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के नाम पर कुठाराघात करने में लगी रहती है। इस वर्ग विशेष के अनेक नाम है जैसे मानवाधिकार कार्यकर्त्ता, एक्टिविस्ट, सिविल सोसाइटी, शहरी नक्सली, साम्यवादी, सेक्युलर टुकड़े-टुकड़े गैंग, NGO वाला आदि। परन्तु इनका एक ही उद्देश्य है "तोड़फोड़"। समस्या यह है कि उनके इस प्रयासों से कुछ हिन्दू युवा भ्रमित हो नासितक बन जाते हैं। यही यह जमात चाहती है। इस लेख में हम ऐसी ही इनकी एक शरारत को उजागर करेंगे। हिन्दुस्तान टाइम्स अंग्रेजी समाचार मुंबई संस्करण में दिनांक १०.०२.२०१६ को सरस्वती पूजा के उपलक्ष में दीपांजना पाल का लेख प्रकाशित हुआ। लेख में लेखिका ने अपनी विकृत मानसिकता का परिचय देते हुए यह लिखा है कि कथाओं के अनुसार पितृसत्तात्मक हिनदू समाज में सरस्वती देवी के रूप में पुरुष देवताओं जैसे ब्रह्मा, विष्णु और महेश को चुनौती देती है। लेख में अपने बचपन के कुछ अनुभवों को प्रस्तुत करने के बाद लेखिता जबरन खींचतान कर यह लिखती है कि सरस्वती के नाम पर दक्षिपंथी हिन्दुओं को उत्साह नहीं है। पूरे लेख में लेखिका ने न तो उस कथा का कोई वर्णन किया जिसके आधार पर उन्होंने सरस्वती देवी के विद्रोही होने का निष्कर्ष निकाला है। न ही यह लिखा कि उसे दक्षिणपंथी हिन्दू कैसे नापसंद करते हैं। केवल अपनी पूर्वाग्रह भरी मानसिकता का परिचय दिया। इस लेख में हम वैदिक मान्यता के अनुसार सरस्वती, ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि नामों पर प्रकाश डालते हुए लेखिका के मानसिक खोखलेपन को उजागर करेंगे।

१. वेद हिन्दू समाज ही नहीं अपितु समस्त विश्व के लिए सार्वभौमिक, सर्वकालिक और सर्वग्राह्य धर्मग्रंथ हैं। सरस्वती, ब्रह्मा, विष्णु शिव आदि नाम चारों वेदों के विभिन्न मन्त्रें में आये हैं। इसलिए इन नामों का उद्गम वेद से होना माना गया है।

२. वेदों के प्रकांड पंडित स्वामी दयानन्द ने वेदों में विशुद्ध एकेश्वार अर्थात् ईश्वर एक है और उन्हें अनेक नामों से जाना जाता है। यह सिद्ध किया है।

वेदमंत्रों में ईश्वर के एक होने के अनेक प्रमाण है। जैसे

ऋग्वेद

१. जो एक ही सब मनुष्यों का और वसुओं का ईश्वर है (ऋग्वेद १/७/६)।

२. जो एक ही है और दोनों मनुष्य को धन प्रदान करता है (ऋग्वेद १/८४/६)।

३. जो एक ही है और मनुष्यों से पुकारने योग्य है (ऋग्वेद ६/२२/१)।

यजुर्वेद

१. वह ईश्वर अचन है, एक है, मन से भी अधिक वेगवान है (यजुर्वेद ४०/४)।

अथवर्वेद

१. पृथ्वी आदि लोकों का धारण करने वाला ईश्वर हमें सुख देवे जो जगत का स्वामी है, एक ही है, नमस्कार करने योग्य है, बहुत सुख देने वाला है (अथवर्वेद २/२/२)।

२. आओ, सब मिलकर स्तुति वचनों से इस परमात्मा की पूजा करो, जो आकाश का स्वामी है, एक है, व्यापक है और हम मनुष्यों का अतिथि है (अथवर्वेद ६/२१/१)।

३. ईश्वर के असंख्य नाम है? ईश्वर के अनेक नाम इसलिए है क्यूंकि ईश्वर के अनेक गुण है। ईश्वर के असंख्य गुण होने के कारण भी ईश्वर के असंख्य नाम

सिद्ध होते हैं। सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम समुल्लास में स्वामी दयानन्द ने अनेक नामों की व्याख्या की है। जैसे

जिस को विविध विज्ञान अर्थात् शब्द, अर्थ, सम्बन्ध प्रयोग का मान यथावत् होवे, इससे उस परमेश्वर का नाम 'सरस्वती' है।

- घर और अधररूप जगत् में व्यापक होने से परमात्मा का नाम 'विष्णु' है।

- जो सम्पूर्ण जगत् को रच के बढ़ाता है, इसलिए परमेश्वर का नाम 'ब्रह्मा' है।

- जो कल्याणस्वरूप और कल्याण का करनेहारा है इसलिए उस परमेश्वर का नाम 'शिव' है।

अतः अनेक ईश्वर होने पर उनके आपस में लड़ने बात केवल एक मिथक सिद्ध होती है। जब ईश्वर एक ही है पर अनेक नाम वाला है। तो यह कोरी कल्पना ही सिद्ध हुई।

४. ईश्वर के तीनों लिंगों में नाम है। एक ही ईश्वर के पुल्लिंग, स्त्रीलिंग और नपुंसकलिंग तीनों लिंगों में नाम है। जब सभी नाम एक ही ईश्वर के हैं तो ब्रह्मा, विष्णु और महेश जैसे नामों को पितृसत्तात्मक और सरस्वती लक्ष्मी देवी आदि को मातृसत्तात्मक के रूप में विभाजित रना केवल मानसिक दिवालियापन है।

५. ईश्वर की परिभाषा को जानने से ऐसी सभी भ्रांतियों का निवारण सरलता से हो जाता है।

ईश्वर- जिसके गुण, कर्म, स्वभाव और स्वरूप सत्य ही है। जो केवल चेतनमात्र वस्तु है तथा जो एक अद्वितीय, सर्वशक्तिमान, निराकार सर्वत्र व्यापक अनादि और अनंक आदि सत्वगुण वाला है और जिसका स्वभाव अविनाशी, ज्ञानी, आनंदी, शुद्ध न्यायकारी, दयालु और अजन्मा आदि है। जिसका कर्म जगत की उत्पत्ति, पालन और विनाश करना तथा सर्वजीवों को पाप, पुण्य के फल ठीक ठीक पहुँचाना है। उसको ईश्वर कहते हैं।- स्वामी दयानन्द

यह लेख यही दर्शाता है कि साम्यवादी मानसिकता ईश्वर, ईश्वर की परिभाषा, ईश्वर की गुण, कर्म और स्वभाव आदि किसी भी विषय पर कुछ नहीं जानते। ये केवल कचरा फैलाना जानते हैं। क्यूंकि इनका उद्देश्य मार्गदर्शन करना नहीं अपितु भटकाना हैं इसलिए इनके सावधान रहे और जहाँ भी ये मिले इनके बौद्धिक प्रदूषण से सबको सचेत करते रहें।

❑❑

पृष्ठ २४ का शेष

सबके उपकार करने वाले यज्ञ को नहीं करने से मनुष्यों को दोष लगता है। जहाँ जितने मनुष्य आदि के समुदाय अधिक होते हैं, वहाँ उतना ही दुर्गन्ध भी अधिक होता है। वह ईश्वर की सृष्टि से नहीं, किन्तु मनुष्यादि प्राणियों के निमित्त से ही उत्पन्न होता है। क्योंकि हस्ति आदि के समुदायों को मनुष्य अपने ही सुख के लिए इकट्ठा करते हैं, इससे उन पशुओं से भी जो अधिक दुर्गन्ध उत्पन्न होता है, सो मनुष्यों के ही सुख की इच्छा से होता है। इससे क्या आया कि जब वायु और वृष्टि जल को बिगाड़ने वाला सब दुर्गन्ध मनुष्यों के ही निमित्त से उत्पन्न होता है, तो उसका निवारण करना भी उनको ही योग्य है। क्योंकि जितने प्राणी देहधारी जगत् में हैं, उनमें से मनुष्य ही उत्तम हैं, इससे वे ही उपकार और अनुपकार को जानने के योग्य हैं। मनन नाम विचार का है है, जिसके होने से मनुष्य नाम होता है, अन्यथा नहीं। क्योंकि ईश्वर ने मनुष्य के शरीर में परमाणु आदि के संयोग विशेष इस प्रकार रचे हैं कि जिनसे उनको ज्ञान की उन्नति होती है। इसी कारण से धर्म का अनुष्ठान् और अधर्म का त्याग करने को भी वे ही योग्य होते हैं, अन्य नहीं। इससे सबके उपकार के लिये यज्ञ का अनुष्ठान भी उन्हीं को करना उचित है। (ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका, वेद विषय विचारः, महर्षि दयानन्द)

❑❑

पृष्ठ २ का शेष

मयूरो वृक्षभेदो वा- अर्थात् शुक्ल वर्ण, मयूर और शुक्ल काणड वाला वृक्षविशेष। ये अर्थ अर्जन से कैसे निकले, यह अन्वेषणीय है। प्रथम अर्थ का निरुक्त भी प्रतिपादन करता है- अर्जुनं शुक्लम् (निरु० २।२१), परन्तु निघण्टु में एक और अर्थ भी है- अजुर्नमिति रूपनाम (निघ० ३।७), अर्थात् सुन्दर। प्रायः इसी अर्थ में वेदों में प्रयोग पाए जाते हैं, जैसे- **"यदर्जुन सारमेय... (ऋक्० ७।५५।२)"** - सुस्वरूप (गृहस्थजन)। **"इन्द्रो हर्यन्तमर्जुनं वज्रं ... (ऋ० ३।४५।५)"** - रूपम्। **"...शंसमर्जुनस्य नंशे ... (ऋक्० १।१२२।५)"** - रूपस्य । **"...त्वारिष्टो अर्जुनो मरुतां... (यजु० १०।२१)"** - प्रशस्तं रूपं विद्यतेऽस्य सः (राजा), आदि अनेक उदाहरण वेदों में उपलब्ध हैं। सो महाभारत का अर्जुन रूपवान् था, यह तो प्रसिद्ध है ही, परन्तु, मेरे ज्ञान में, उसके गौर (श्वेत) वर्ण होने का उल्लेख नहीं प्राप्त होता।

इस पद के कुछ और भी अर्थ हमें वेदों में प्राप्त होते हैं। इनमें से एक रोचक है - **"अहश्च कृष्णमहरर्जुनं च... ।। ऋक्० ६।९।१।।"** - ऋजुगत्यादिगुणं दिनम् - अर्थात् सरल स्वभाव वाला। यहां महर्षि ने 'ऋज गतिस्थानार्जनोपार्जनेषु' धातु से यह शब्द निष्पन्न किया है, जिस धातु के अर्थ गति, स्थिति, संचय, समीप में वस्तु जोडना अर्थ होते हैं। सो, मन्त्र में सीधी, सरल गति वाले के लिए यह शब्द प्रयुक्त हुआ है। जहां अर्जुन के सरल स्वभाव की चर्चा तो हम नहीं पाते, तथापि उसके स्वभाव में कुटिलता भी नहीं पाते। सम्भव है, इस गुण के ऊपर उनका नामकरण हुआ हो।

३) **गान्धारी** - गन्धार देश की होने के कारण, धृतराष्ट्र की पत्नी का नाम गान्धारी था। जबकि 'गान्धारी' पद तो मुझे प्राप्त नहीं हुआ, परन्तु रानी के गुणों को बताने वाले मन्त्र में 'गन्धारी' पद अवश्य मिला, यथा- **"...गन्धारीणामिवाविका (ऋक्० १।१२६।७)"** - यथा पृथिवीराज्यधर्त्रीणां मध्ये (महर्षेर्व्याख्या)- अर्थात् पृथिवी पर राज्य का धारण करने वाली (रक्षिका रानी)। यदि स्वार्थ में हम अण् प्रत्यय मानें, तो 'गान्धारी' निष्पन्न होगा, और एक राज्ञी के लिए यह उपयुक्त नाम है। सम्भवतः, गन्धार देश का नाम भी इसी अर्थ में रखा गया हो- पृथिवी पर धारण किया हुआ सुरक्षित राज्य।

४) **अम्बा, अम्बिका, अम्बालिका** - एक और अति रोचक उद्धरण मुझे तीनों बहनों के नाम का मिला- **". .. अम्बे अम्बिके अम्बालिके न मा नयति कश्चन। . ..(यजु० २३।१८)"** - हे मातः, पितामहि, प्रपितामहि! - अर्थात् इन नामों के क्रमशः अर्थ हैं- माता, दादी और परदादी। जबकि ये तीनों थीं तो बहनें, परन्तु वेदमन्त्र में ये तीन नाम एक के बाद एक पढ़े गए हैं। ये बहनें एक उम्र वाली तो थीं नहीं, तो उनके माता-पिता को पहले ही कैसे ज्ञात हुआ कि उनके तीन बेटियां होंगी जिनके नाम उन्होंने इस वेदमन्त्र से एकसाथ चुन लिए? अथवा, और यह अधिक सम्भव है, उन सभी के जन्मों के बाद उनके नाम परिवर्तित कर दिए गए हों। तथापि यह उद्धरण दर्शाता है कि रामायण, महाभारत काल में हमारे पूर्वजों को वेदों का कितना गहन ज्ञान था!

अन्य जो नाम हम महाभारत में पाते हैं, वे या तो अत्यन्त सरल हैं, जैसे कर्ण, भीम, भीष्म, नकुल, कुन्ती अथवा समस्त पद हैं, जिनके भी अर्थ सुगम हैं, जैसे धृतराष्ट्र, युधिष्ठिर, दुर्योधन, दुश्शासन, सञ्जय। कुछ अन्य पात्र अपने सम्बन्धों से जनित तद्धित-र्पत्ययान्त नामों से अधिक प्रसिद्ध हैं, जैसे गान्धारी, माद्री। इससे यह भी ज्ञात होता है कि हमारे पूर्वजो को अतीव सरल नाम भी अत्यन्त प्रिय थे, चाहे वे राजवंशियों के ही क्यों न हों। आजकल के अवशिष्ट राजघरानों में नकुल (नेवला) जैसे नाम को अत्यन्त हेय दृष्टि से देखा जायेगा, परन्तु प्राचीन काल में ऐसा नहीं था।

अन्य जो पद हमें ऊपर मिले उससे कुछ रोचक अंश सामने आए और हमारे पूर्वजों में वेदज्ञान की प्रचुरता पुनः स्थापित हुई। अब यदि हम अपनी सन्तानों के नाम इन महाकाव्यों पर आधारित रखते हैं, तो हम गलत नहीं जा सकते हैं!

❑❑

आर./आर. नं० १६३३०/६७
Post in Delhi R.M.S
०५-११/६/२०१६
भार- ४० ग्राम

जून 2019

रजिस्टर्ड नं० DL (DG -11)/8029/2018-20
लाईसेन्स नं० यू (डी०एन०) १४४/२०१८-२०
Licenced to post without prepayment
Licence No. U (DN) 144/2018-20

पाठकों से निवेदन

१. अपने पत्रों में अपनी ग्राहक संख्या अवश्य ही लिखा करें, अन्यथा कार्यवाही सम्भव नहीं होगी।

२. १५ तारीख तक प्रतीक्षा करके ही दुबारा अंक मँगाएं, यदि अंक न पहुँचा हो।

३. यदि आप अपना पता बदलवायें तो यह ध्यान रखें कि बदले हुए पते पर अंक-प्रेषण एक माह बाद आरम्भ होगा।

४. अंक के रेपर पर अपना पता चैक कर लिया करें। यदि कोई त्रुटि हो, तो सूचना दे दिया करें।

५. जिन ग्राहकों का शुल्क समाप्त है, अविलम्ब भेजने की कृपा करें।

दिनेश कुमार शास्त्री
कार्यालय व्यवस्थापक
मो०-९६५०५२२७७८

ओ३म्

भारत में फैले सम्प्रदायों की निष्पक्ष व तार्किक समीक्षा के लिए उत्तम कागज़, मनमोहक जिल्द, सुन्दर आकर्षक छपाई एवं (द्वितीय संस्करण से मिलान कर शुद्ध प्रामाणिक संस्करण)

सत्य के प्रचारार्थ

सत्यार्थ प्रकाश

सत्य के प्रचारार्थ

• प्रचार संस्करण (अजिल्द) 23×36÷16	मुद्रित मूल्य 50 रु.	प्रचारार्थ 30 रु.	प्रचारार्थ मूल्य पर कोई कमीशन नहीं
• विशेष संस्करण (सजिल्द) 23×36÷16	मुद्रित मूल्य 80 रु.	प्रचारार्थ 50 रु.	
• उपहार संस्करण	मुद्रित मूल्य 1100 रु.	प्रचारार्थ 750 रु.	
• स्थूलाक्षर सजिल्द 20×30, 8	मुद्रित मूल्य 150 रु.		प्रत्येक प्रति पर 20% कमीशन

कृपया, एक बार सेवा का अवसर अवश्य दें और महर्षि दयानन्द की अनुपम कृति सत्यार्थ प्रकाश के प्रचार प्रसार में सहभागी बनें

आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट
427, मन्दिर वाली गली, खारी बावली, दिल्ली-6
Ph. :011-43781191, 09650522778
E-mail : aspt.india@gmail.com

छपी पुस्तक/पत्रिका

श्री सेवा में.....
ग्राम.....
डा० .....
जिला.....

मुद्रक, प्रकाशक व सम्पादक धर्मपाल आर्य, स्वामित्व आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, ४२७, गली मन्दिर वाली, नया बांस, खारी बावली, दिल्ली-११०००६ से प्रकाशित एवं तिलक प्रिंटिंग प्रेस, २०४६, बाजार सीता राम, दिल्ली-११०००६ से मुद्रित।